गरजत-बरसत अध्याय 1

हिन्दी ADDA

असग़र वजाहत

गरजत-बरसत

अध्याय 1

मेरे रंग-ढंग से सबको यह अंदाज़ा लग चुका था कि दिल्ली ने मेरी कमर पर लात मारी है और साल-डेढ़ साल नौकरी की तलाश में मारा-मारा फिरने के बाद मैं घर लौटा

हूं। अपमानित होने का भाव कम करने के लिए मैं लगातार ऊपर वाले कमरे में पड़ा सोचा करता था या 'जासूसी दुनिया` पढ़ा करता था। दो-तीन दिन बाद अतहर को पता चला कि मैं आया हूं तो वह आ धमका और उसके साथ मैं शाम को पहली बार निकला था।

छोटा-सा शहर, छोटी-छोटी दुकानें, पतली सड़कें, रिक्शे और साइकिलें, सब कुछ मैं दिल्ली की आंख से देख रहा था और मुझे काफी अच्छी लग रही थीं। अतहर के साथ मामू के होटल में गया। वहां मुख्तार आ गया। कुछ देर बाद हम तीनों उमाशंकर के पास गये। रेलवे प्लेटफार्म की एक बेंच पर कुल्लड़ों में चाय लेकर हम बैठ गये और इन लोगों ने मेरे ऊपर सवालों की बौछार कर दी। मैं सोचने लगा कि इन सबको मैं क्या बताऊं? ये सब मेरे दोस्त हैं। अतहर मेरे साथ स्कूल में था अब तक बारहवीं पास करने के लिए साल दो साल बाद इम्तिहान में बैठ जाता है। उमाशंकर ने इंटर पास करने का मोह भी त्याग दिया है और कपड़े की दुकान खोल ली है। मुख्तार सिलाई का काम करता है और उर्दू अखबारों का बड़ा घनघोर पाठक है। इनमें शायद कोई कभी दिल्ली गया भी नहीं है। मैं इन्हें क्या बताऊं कि मरे साथ क्या हुआ? क्या इसके पीछे यह अहंकार तो नहीं है कि मैं एम.ए. हूं और ये लोग पढ़े-लिखे नहीं हैं। मेरी बात समझ नहीं पायेंगे? हां शायद यही है। इसलिए मुझे बताना चाहिए कि मेरे साथ क्या हुआ था हुआ था ये चाहे समझें चाहे न समझें लेकिन मेरे मन के ऊपर से तो बोझ हट जाएगा।

"बताओ यार साजिद. . .तुम तो चुप हो गये. . . लेव बीड़ी पियो।" अतहर ने एक सुलगती बीड़ी मेरी तरफ बढ़ा दी।

"कहीं कोई प्रेम-व्रेम का चक्कर तो नहीं हो गया।" उमाशंकर ने हंसकर कहा। मेरे चेहरे पर बड़ी फीकी मुस्कुराहट आ गयी। दूर से आती खाली माल गाड़ी करीब आ गयी थी और कुछ मिनट उसकी आवाज़ की वजह से हमारी बातचीत बंद रही।

"बस ये समझ लो नौकरी नहीं मिली।" मैं बोला।

"अरे तो नौकरी साली मिलती कहां है। मुझी को देखो चार शहरों के बेरोज़गारी दफ़्तरों में नाम लिखा हुआ है।" अतहर ने कहा।

"तुम्हें नौकरी क्या मिलेगी?" उमाशंकर ने उदासीनता से कहा।

"क्यों? अबे साले आई..टी.आई. का कोर्स किया है।"

"तो अब क्या सोचा है?" मुख्तार ने मुझसे पूछा।

"सोचा है नौकरी न करूंगा।"

"वाह यार वाह ये बात हुई. . .मैं तो तुमसे पहले से ही कह रहा था कि तुम्हारे लिए नौकरी चुतियापा है। यार जिसके पास इतनी ज़मीन हो, आम, अमरूद के बाग हों वह हज़ार बारह सौ की नौकरी क्यों करे?" अतहर ने जोश में कहा।

मुझे याद आया वह मेरे दिल्ली जाने से पहले भी यह सलाह दे चुका था। उस वक़्त यह मेरी समझ में नहीं आया था। दिल्ली में बाबा ने समझा दिया। या हालात ने मजबूर कर दिया या और कोई रास्ता ही नहीं बचा और बचा है पूरा जीवन।

"पर यार खेती करना है तो केसरियापुर में ही रहना पड़ेगा।" अतहर ने कहा।

"मैं जानता हूं यार।" मेरे ये कहते ही उन तीनों के चेहरे दमक गये और मुझे यहां उनके साथ बिताये पुराने दिन याद आ गये। जब हम पुलिया पर बैठकर पार्टी करते थे। जब पुलिस की ज्यादतियों के खिलाफ़ एस.पी. से मिलने गये थे। रात में मुख्तार की दुकान के अंदर लालटेन की रोशनी में गर्मागर्म बहसे किया करते थे। मामू के होटल में चाय के दौर चला करते थे। मैं बिल्कुल उनका एक हिस्सा बन गया था। मुख्तार कहता भी था, तुम तो एम.ए. पास नहीं लगते। अरे लौण्डे इंटर कर लेते हैं तो हम लोगों से सीधे मुंह बात नहीं करते।

अब्बा से जब मैंने कहा कि मैं नौकरी नहीं बल्कि खेती करना चाहता हूं और केसरियापुर में रहना चाहता हूं तो कुछ क्षण के लिए उनकी कुछ समझ में आया नहीं। एम.ए. पास करने के बाद गांव में रहना और खेती करना? हालत ये है कि लड़का हाई स्कूल कर लेता है तो गांव का मुंह नहीं देखता। इंटर कर लेता है तो खेती करने से चिढ़ने लगता है लेकिन यह भी है कि आज खेती में पैसा है। कुर्मियों ने अच्छा पैसा कमाया है। केसरियापुर में बिजली आ गयी है। दो-चार ट्यूबवेल भी लग गये हैं।

अब्बा कुछ देर सोचते रहे और अम्मां ने कहा "तुम वहां रहोगे कैसे?"

मैं उन्हें क्या बताता कि दिल्ली के मुकाबले वहां रहना स्वर्ग में रहने जैसा होगा।

"देखो रहने की तो कोई मुश्किल नहीं है। ख़ुदा के फ़ज़ल से इतना बड़ा चौरा है। हां खाने की दिक्कत हो सकती है. . .वैसे रहमत के यहां तुम्हारा खाना पक सकता है. . .ये बात ज़रूर है भई कि गांव वाला होगा।"

इस बार केसरियापुर जाना बहुत अलग था। दिल में तरह-तरह के ख्याल आ रहे थे। सैकड़ों डर थे और उनके साथ यह यकीन कि मैं कामयाब हूंगा। कामयाबी से मतलब यही कि अच्छी तरह खेती करूंगा। अच्छी फसल होगी। अच्छा पैसा मिलेगा और फिर जैसे बावा ने दिल्ली में कहा था "तुम जाड़ों में मुंबई जाए करना। गर्मियों में नैनीताल और दो-तीन साल में एक चक्कर योरोप का लगा सकते हो। यार पैसा हो तो आदमी सब कुछ कर सकता है और बिना पैसे के जिंदगी गुज़ारना, भुखमरी में रहना भी कोई जीवन है।" खेती कैसे होती है, मेरे ख्याल से मुझे मालूम था। अब अगर करना था तो उसका इंतिज़ाम, पूरी व्यवस्था और देखभाल।

इससे पहले हम जब भी केसरियापुर आते थे सीधे चौरे तक पहुंचते थे और बाकी गांव कैसा है, क्या है, कौन रहता है, कैसे रहता है। इसकी कोई जानकारी न थी। लेकिन अब दो पीढ़ियों बाद केसरियापुर फिर घर बन रहा है। मैंने सोचा सबसे पहले तो गांव ही देखा जाए। रहमत खुशी-खुशी इस पर तैयार हो गया। रहमत की बूढ़ी और कादार आंखों में चमक आ गयी और मैं उसके साथ गांव देखने निकल पड़ा। चौरा तो गांव के कोने पर है जहां से हम लोगों की जमीनें और बाग शुरु होते हैं। गांव के अंदर की दुनिया देखने के ख्याल से मैं पहली बार निकला। रहमत के सिर पर अंगौछा और हाथ में लाठी थी।

वह मेरे पीछे-पीछे चल रहा था। गांव के अंदर टोलों के बारे में वह बता रहा था पंडितों का टोला, ठाकुरों का टोला, अहीर टोला, कुर्मियाना, मियां टोला, चमार टोला, इतने हज़ार या सौ साल बाद भी हमारा समाज टोलों का समाज है। मिट्टी के घरों का आकार और रूपरेखा टोलों के हिसाब से बदल जाती है लेकिन हर घर के सामने छप्पर

और उसके पीछे बड़ा दरवाज़ा। कच्ची गलियां, रंभाते हुए जानवर, कच्चे-पक्के कुओं पर औरतों की भीड़, गलियों में दौड़ते नंग-धड़ंग बच्चे, बैलगाड़ियों की आवाजाही, कच्चे घरों के अंदर से निकलता धुएं का तूफान और कच्ची गलियों में गोबर के छोत। गांव का हर आदमी मुझे हैरत से देख रहा था। रहमत सबको बता रहा था। 'डिप्टी साहब के लड़कवा अहैं। अब हीन रहके खेती करिवहियें' दो-एक लोग पास आकर मिल रहे थे। इनमें ज़्यादातर बूढ़े थे। सब कह रहे थे कि मैंने बड़ी अच्छा किया जो पुरखों का चौरा बसा दिया। इतनी ज़मीन गांव में किसी के पास नहीं है। ढंग से खेती करायी जाएे तो सोना उगल देगी। घूमते हुए हम कंजरों के टोले में पहुंच गये। अब्बा के ज्यादातर बटाईदार कंजड़, चमार और लोध हैं। कंजरों ने एक घर के सामने खटिया बिछा दी और रहमत ने कहा कि मैं बैठ जाऊं। मैं बैठ गया और कंजड़ सामने ज़मीन पर बैठ गये। चर्चा होने लगी कि अगर पानी की व्यवस्था हो जाए तो धन के बाद गेहूं भी होने लगे।

असली आमदनी तो गेहूं में है। कंजड़ों ने कहा कि वे अच्छा गेहूं पैदा कर सकते हैं। उन्हें शायद यह पता नहीं था कि मैं तो खुद खेती कराना चाहता हूं यानी बटाईदारी ख़त्म करना चाहता हूं। हो सकता है ये डर उनके दिलों में हों और इसीलिए वे अपनी भूमिका को बढ़ा-चढ़ाकर पेश कर रहे हों। चिराग जलने से पहले मैं लौट आया।

टीन के बड़े से शेड, जिसे यहां सब सायबान कहते हैं, के नीचे चारपाई पर लेटा मैं सोच रहा था कि गांव में रात कितनी जल्दी होती है। लगता है एक बड़ा-सा समुद्री जहाज़ अंधेरे और कोहरे में गायब हो गया हो। लाइट नहीं आ रही थी। सायबान के नीचे खूंटी पर लालटेन जल रही थी। सामने अहाता है और बीचोंबीच टीन का फाटक। दाहिनी तरह कुआं है और उससे कुछ हटकर नीम का पेड़। सायबानों के बीच में मकान के अंदर जाने का पुराना पहाड़ जैसा दरवाज़ा है। सायबानों के पीछे लंबे-लंबे कमरे हैं। किनारे पर कोठरियां हैं और लंबे कमरे के पीछे लंबे बरामदे हैं। लंबा चौड़ा आंगन है। जिसके दाहिनी तरफ छोटी-छोटी कोठरियां बनी हैं। इनमें से दो-तीन की छतें गिर चुकी हैं। मैंने यह सोचा है कि एक लंबे कमरे में रहूंगा और पिछले दरवाज़ों से घर के अंदर वाला हिस्सा इस्तेमाल नहीं करूंगा। बरामदे के तौर पर सायबान ही काम

आयेगा। कहा जाता है पिछली कोठरियों में जिन्न रहते हैं। उन्हें आराम से रहने दिया जाए।

अहाते का टीन वाला फाटक खुलने की आवाज़ आई तो सन्नाटे में अच्छी खासी डरावनी लगी। टार्च की रौशनी में रहमत आता दिखाई पड़ा। उसके साथ उसका लड़का गुलशन भी था। गुलशन के हाथ में खाना था। अपने बाप से बित्ताभर ऊंचा गुलशन कड़ियल जवान है।

यहां मेज़ नहीं है। कुर्सी नहीं है। सिर्फ चारपाइयां हैं या एक छोटा-सा तख्त़ है। तख्त़ पर मेरे आने के बाद दरी बिछा दी गयी है। ये मैंने सोचा भी कि अगर कभी कुछ लिखने का जी चाहे तो मेज़ के बगैर कैसे काम चलेगा? फिर ये सोचा कि शायद ही कभी यहां लिखने की ज़रूरत पड़े। बहुत से बहुत डायरी में खर्च और आमदनी का हिसाब। उसके लिए मेज़ कुर्सी की क्या ज़रूरत है।

गुलशन ने तख्त़ पर खाना लगा दिया। अरहर की दाल जिसमें असली घी खूब तैर रहा है। आलू की सब्ज़ी, सिरके में रखी गयी प्याज़, गुड़ की आधी भेली, मोटी, गेहूं की लाल रोटियां। पता नहीं क्यों होराइज़नग्रुप के नीचे सरदार के ढाबे में खाये राजमा चावल की बात सोचने लगा। फिर सरयू का ख्य़ाल आया। बेचारा वहीं होगा। कनाट प्लेस वाले टी-हाउस के सामने फटी चप्पल घसीटता। मैं खाने लगा। रहमत बताने लगा कि गोश्त और हरी सब्जी तो कम ही मिलती है यहां। वह कल खुरजी जाएगा तो गोश्त लायेगा।

रात में देर तक नींद नहीं आई। दूसरे तरफ के सायबान में गुलशन लेटते ही सो गया था। लालटेन की रौशनी में काला सायबान कोई जीती-जागती चीज़ लग रहा था। सामने अंधेरे का महासागर। घर के अंदर जिन्नातों का मस्कन। सोचा कहीं तिलावते-कुरान की आवाजें न आने लगें। कोई बात नहीं है, आयें। लेटे-लेटे पता नहीं कैसे अहमद का ख्य़ाल आया। कहां होगा? कलकत्ता में अपनी सुंदर पत्नी इंदरानी के साथ या लंदन में लिप्टन की नौकरी में? या टाटा टी गार्डेन्स में. . . .और मैं? चलो अपने ऊपर हंसा जाए। ऊंह क्या बेवकूफी है. . .अहमद की सोच कितनी साफ है। कोई लाग-लपेट नहीं पालता। किस्मत भी है। ख़ैर किस्मत क्या है वह जिस क्लास में पैदा

हुआ उसके फायदे हैं। वैसे शकील को नहीं हैं। वह तो बस्ती में अपने भाइयों और अय्याश अब्बाजान के षड्यंत्रों का शिकार हो रहा होगा। सीध है बेचारा। और अलीगढ़ में सब कैसे होंगे? जावेद कमाल? के.पी.? कामरेड लाल सिंह? एक फिल्म की तरह लेकिन कुछ सेकेण्ड में पिछले दस साल आंखों के सामने से निकल गये। अब मैं कहां हूं? उनसे कितना दूर? इस उजाड़ वीरान गांव में संघर्ष करता कि कुछ पाऊं. . कुछ कर सकूं. . .कुछ तो करना ही था यार। छब्बीस- सत्ताइस साल की उम्र में ये तो नहीं हो सकता कि मैं कुछ न करूं?

धान कट चुका था और अब गेहूं बोना था। दो महीने खुरजी के बिजली ऑफिस में जूते घिसने के बाद कनेक्शन भी मिल गया था। बोरिंग होना थी मोटर बैठाना था। सो उम्मीद थी कि एक महीने में हो जाएगा। मतलब गेहूं को पहला पानी देने के वक्त ट्यूबवेल तैयार होगा। सोचना यह था कि क्या पूरी चालीस बीघा खेती बटाईदारों से ले ली जाए और खुद खेती करायी जाए? अगर खुद खेती करायी जाए तो हल बैल और उसे ज्यादा मसला था हलवाहों का? वे कहां से आयेंगे? चालीस बीघा खेती कराने के लिए कम से कम तीन जोड़ी बैल और तीन हलवाहे चाहिए थे। अब मुश्किल यह थी कि हलवाहों को बड़े किसानों ने पहले ही फंसा रखा था। रहमत ने बताया था कि ज्यादातर हलवाहे ठाकुरों के बंधुआ हैं। कुछ तो कई-कई पीढ़ियों से हैं। बाकी लोग हलवाहों को उधर कर्जा देकर उलझाये रखते हैं ताकि उन्हीं का काम करते रहें। ये सोचकर भी अजीब लगा कि ऐसे हलवाहे ही नहीं हैं जो पैसा लें और काम करें। मतलब आपको एक 'सर्विस` चाहिए। आप पैसा दें और सर्विस लें। लेकिन यहां तो हाल ही अजीब है। सर्विस आपको मिल ही नहीं सकती क्योंकि उस पर कुछ लोगों ने एकाधिकार बना रखा है। आप उसे कैसे तोड़ सकते हैं? पैसा देकर? मान लीजिए ठाकुर रणवीर सिंह ने पांच सौ के कर्ज में हलवाये को बंधुआ बनाया हुआ है और आप हलवाहे को पांच सौ दें और कहें कि तुम रणवीर सिंह के यहां से मुक्त होकर हमारे यहां आ जाओ? रहमत ने बताया कि पहले तो हलवाहा न तैयार होगा। इतना डर और आतंक है रणवीर सिंह का। दूसरा हलवाहे मान भी जाए तो रणवीर सिंह से हमेशा की अदावत हो जाएगी

. . . समझ लो भइया पक्की दुश्मनी और भइया ठाकुरों से दुश्मनी लेना ठीक नहीं है। बड़े ही साले उद्दण्डी हैं। अहीरों से भी बच के रहना ही ठीक है।"

"इसका मतलब है हलवाहे ही नहीं मिलेंगे और खेती ही नहीं हो पायेगी।" मैंने चिढ़कर कहा।

"नहीं खेती क्यों न हो पायेगी. . .अब खोजना पड़ेगा।" रहमत ने कहा।

"आपसे ग्राम सेवक मिलने आये हैं?" मैं सुबह के वक्त़ सायबान में बैठा फाटक खोलकर अंदर आते आदमी को देखकर रहमत ने बताया।

"ये क्या होता है?"

"अरे यही खेती ऊती के बारे में बताते हैं। खुद कुछ नहीं जानते। दुनियाभर को बताते फिरते हैं. . . गांव में तो इन्हें कोई फटकने नहीं देता . . .ब्लाक ऑफिस से हैं।"

"नमस्कार जी. . . र, उस आदमी ने इस गांव में पहली बार मुझे नमस्कार किया।

"नमस्कार. . .आइये।"

"मैं इस क्षेत्र का वी.एल.डब्ल्यू. हूं. . . 'विलिज लेविल वर्कर` मतलब ग्राम सेवक. . .मेरा नाम हरिपाल त्यागी है।"

वह बैठ गया। उसने अपना झोला रखा।

"पानी पिलवाया जाए आपको त्यागीजी?" रहमत ने पूछा। मुझे आश्चर्य हुआ कि यह पूछा क्यों जा रहा है। फिर ध्यान आया, हां जातिवाद. . .हो सकता है त्यागी जी मुसलमानों के यहां का पानी न पियें।

"हां पिलवाओ रहमत भाई।" मतलब त्यागी रहमत को पहले से जानते हैं।

"हमें तो श्रीमान बड़ी प्रसन्नता हुई जब पता चला कि एक एम.ए. पास व्यक्ति गांव में खेती कराने आ गये हैं।" त्यागी जी ने कहा .

"आप जैसे लोग तो गांव की तरफ देखते नहीं. . .यही हमारा और देश का दुर्भाग्य है. . .जब तक पढ़े लिखे लोग गांव में नहीं आयेंगे तब तक. . ."

उनकी बात काटकर रहमत बोला "य लेव त्यागी जी पानी पियो।" तश्तरी में पानी का गिलास के साथ बढ़िया गुड़ की आधी भेली भी थी। त्यागी जी ने मजे से पूरा गुड़ खाया और पानी पिया और पानी लाने को कहा।

"मैं तो जी पश्चिमी उत्तर प्रदेश का हूं. . .मुज़फ्रनगर. . .आप जानते ही हैं विकसित क्षेत्रों में माना जाता है। किसान प्रगतिशील हैं. . .यूरिया वग़ैरा का प्रयोग करते हैं. . .इस क्षेत्र के किसानों की तो समझ में ही नहीं आता. . .वे तो इस पर तैयार नहीं है कि उनकी पैदावार चार गुना हो जाएे. . .अरे पांच मन का बीघा पैदा करते हैं. . .मैं बीस मन के बीघा की तो गारंटी देता हूं।"

ग्राम सेवक त्यागी से मिलकर मेरा उत्साह चौगुना हो गया। वाह क्या आदमी है, खाद बीज पानी और खरीद सबके बारे में 'डिटेल्स` हैं इसके पास। यह भी बता रहा है कि रासायनिक खाद पर सब्सिडी है। अगर चाहूं तो सरकारी बैंक 'लोन` भी दे सकता हैं यह भी कहता है कि वह तो रोज़ आकर मेरी फसल देख सकता है। यह ध्यान रखेगा कि कोई कीड़ा-वीड़ा न लगने पाये। मैंने पक्का निश्चय कर लिया कि उसकी सलाह पर चलूंगा।

रहमत ने बड़ी मुश्किलों से एक हलवाहे का इंतिज़ाम किया। तन्ख्वाह ठहरी दो सौ रुपये महीने। जो यह सुनता था दांतों तले उंगली दबा लेता था। गांव में हलवाहों को पच्चीस पचास महीना और दो बीघा खेत से ज्यादा न मिलता था क्योंकि वे बंधुआ या कर्जदार हुआ करते थे। अब मैं कहां से लाता ऐसे हलवाहे। ग्राम सेवक ने खाद की बात पक्की कर दी। यह कहा कि नया बीज आर.आर. इक्कीस आया है, इसे ही आप बुआवें क्योंकि इसका पौध गिरता नहीं, छोटा होता है और बालियों में दाने भी ज्यादा लगते हैं। यह पंतनगर का बीज है।

यहां इतना काम था कि अपने ऊपर यह सोचकर हंसने का समय भी नहीं मिलता था कि तीन महीने पहले मैं पत्रकारिता की दुनिया में राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय समाचारों

के साथ उठता बैठता था और अब . . .मैंने कई सप्ताह से अखबार नहीं पढ़ा है। मुझे इस पर खेद या पछतावा भी न था। मैं यह मान चुका था कि वह दुनिया 'फ्राड` और धोखा है। मेरा वहां कोई गुज़र नहीं है और अगर मैं अपनी जगह बना सकता हूं तो यहीं और सिर्फ यहीं क्योंकि पैसा मैं यहीं कमा सकता हूं। बिन पैसा सब सून। बड़े-सा बड़ा दर्शन, संगठन, समाज, देश और पता नहीं क्या-क्या सब बेकार है बिना पैसे के। कोई दूसरी समानान्तर व्यवस्था मनुष्य नहीं बना सका है जहां पैसे की केन्द्रीय भूमिका न हो। लेकिन इतना तय है कि मानवता के लिए ऐसी व्यवस्था स्थापित करना एक अद्‌वितीय उपलब्धि होगी जो पूंजी के बजाय श्रम, बुद्‌धि----और ज्ञान से संचालित हो।

अब सवाल यह था कि हलवाहे से तो चालीस बीघा की खेती नहीं हो सकती। मैंने रहमत से कहा कि दूसरे हल से मैं जोत लूंगा। वह मेरी तरफ अविश्वास से देखता रहा और फिर हंसने लगा।

"क्यों क्या बात है**?** मुझमें क्या कमी है**?**"

"भइया हल चलाना सीखना पड़ेगा. . .कहीं जानवर के पैर में लग गया तो हज़ार डेढ़ हज़ार की जोड़ी बेकार हो जाएगी।"

मजबूरी में तय पाया कि सिर्फ दस बीघा में गेहूं बोया जाएे. . .फिर आगे देखा जाएेगा। कुछ गांव के बूढ़े आकर कहते थे ये जमीन धनई है। इसमें गेहूं न होगा। ग्राम-सेवक कहता था कि ये लोग पागल हैं, जाहिल हैं। ये दोमट माटी है इसमें तो गेहूं ऐसा लहलहायेगा कि लोग देखते रह जाएेंगे। मैं ग्राम सेवक के तर्कों से संतुष्ट हो जाता था जबकि गांव के दूसरे लोग उन तर्कों के साथ अनुभव भी जोड़ लेते थे और उसमें संदेह, शक और 'पता नहीं क्या हो` वाला भाव जुड़ जाता था। काफी समय बाद मैं समझ पाया कि यही शायद इन लोगों की शक्ति है। संदेह करना, फूंक-फूंककर कदम रखना, जहां सब कुछ अच्छा ही अच्छा दिखाई दे रहा हो वहां कुछ थोड़े अनिष्ट की कल्पना कर लेना ताकि अपनी तैयारी पूरी रहे।

काम कोई एक न था और काम इस तरह निकल आते थे जैसे जादू के पिटारे से रूमाल निकलने लगते हैं। ब्लाक का चक्कर, तहसील का दौरा, सहकारी बैंक में काम-काज, बिजली दफ्तर, कुंजड़े से पैसा वसूल करना, डांगर की जोड़ी खरीदना, बीज गोदाम में अपनी मांग दर्ज कराना, खेतों की पैमाइश के लिए पटवारी के घर के चक्कर, बिजली का मोटर लेने के लिए कानपुर का दौरा. . .इन सब कामों में दिन पूरी तरह गुजरता था। रात में खाना खाने के बाद चौपाल जम जाती थी। बटाईदार जानते थे कि मुझे खुश न रखा गया तो जोतने को ज़मीन न मिल पायेगी। मेरे लिए बड़ी मुश्किल थी कि किसे मना करूं। ये सब पिछले बीस-बीस साल से बटाई पर यह ज़मीन जोत रहे थे और कायदे से उनका 'शिकमी हक` बन गया था । लेकिन अब्बा यानी डिप्टी साहब के कारण कागज़ों पर कभी उनका नाम न आ पाया था। तो क्या करूं? यूनिवर्सिटी में पढ़ा लिखा, मार्क्सवाद के सिद्धांत, हक की लड़ाई, सर्वराहारा के प्रति सहानुभूति या पैसा? अब्बा की मर्जी के बगैर मैं कोई बड़ा फैसला तो ले भी न सकता था। सोचा जैसे चल रहा है वैसा ही चलने दूं और कोई बीच का रास्ता निकालूं। जो बटाईदार ठीक से काम नहीं करते उन्हें हटा दूं फिर देखा जाएगा।

रात के खाने के बाद रामसेवक कंजड़, किशना चमार, यादव पहलवान और नंबरी आ जाते थे। रामसेवक बटाईदार है। दस बीघा जोतता है। नौजवान आदमी है। खेती से छुट्टी मिलती है तो जंगली जानवरों के शिकार पर चला जाता है। किशना पक्का खेतिहर है। भूमिहीन है और बटाई की खेती करता है। यादव पहलवान के पास अपनी स्वयं की ज़मीन है। उनके पिता जी और अब्बा में कुछ सहयोग और भाईचारे के संबंध रहे हैं, इसलिए वो आ जाते हैं। नंबरी कुर्मी हैं। ज़मीन कम है उनके पास इसलिए हमारे बटाईदार हैं। जैसे गांव के हंसोड़, मज़ाक़िया लोग होते हैं वैसे ही नंबरी हैं। बीड़ी पीने के शौकीन हैं और रोज़ रात में दो-चार बीड़ी पी जाते हैं। किशना और रामसेवक नीचे ज़मीन पर बैठते हैं। नंबरी और यादव पहलवान तख्त पर बैठते हैं। यह भी नियम या इस तरह के नियम कितने पक्के हैं इसका अंदाज़ा मुझे पहले न था। खेती किसानों की बातें, इधर उधर की बातें, गांव के नए हालात, तहसील, थाने की बातें, ग्राम सेवक के किस्से और न जाने क्या-क्या छिड़ जाते हैं। मैं ख़ामोश ही रहता हूं क्योंकि उसमें जोड़ने के लिए मेरे पास कुछ नहीं होता। इन महफ़िलों में रहमत भी रहता है। वह भी

नीचे लेकिन सायबान के मोटे लोहेवाले खंभे से टिककर बैठता है। बटाईदार उसे बहुत मानते हैं क्योंकि उसी से डिप्टी साहब की आंखें और कान माना जाता है।

दो महीने बाद गेहूं लगवाकर मैं शहर आया तो शहर इतना बड़ा लगा कि जिंदगी में कभी न लगा था। यह सोचकर हंसी आ गयी कि कुछ बड़ा या छोटा नहीं होता। यह सब हमारा आपका नजरिया है जो विभिन्न संगतियों से बनता है। बस अड्डे में अपनी दुकान पर ताहिर मिल गया। वह खुश हो गया और बोला- "अरे यार पूरे दो महीने लगा दिए. . .कहो क्या-क्या करा आये?" मैंने उसे बताया। दुकान पर बैठकर हम चाय पीने लगे। हाजी जी नमाज़ पढ़ने गये थे।

"यार झुलस गये तुम।" वह मेरी तरफ देखकर बोला। मुझे खुशी हुई। काम में झुलसना तो बड़ी बात है। लेकिन प्राब्लम यह थी कि मैं दो महीने से अखबार न देख सका था। खुरजी में इधर-उधर कभी पढ़ने को मिल जाएग करता था लेकिन अखबार से जो सिलसिला बनता है वह टूट चुका था।

घर आया तो अम्मां देखकर खुश हो गयी। खाला ने मेरे पसंद के खाने चढ़वा दिए। अब्बा हैरत से सुनते रहे कि इन दो महीनों में मैंने क्या-क्या कर डाला था। वे हिसाब लगाने लगे कि दस बीघा में जैसा कि ग्राम सेवक कहता है, बीस मन का बीघा न सही अगर अट्ठारह मन का बीघा भी हुआ तो कोई साढ़े तेरह हज़ार का गेहूं हो जाएगा। अगली फसल पर अगर बीस बीघे में बोआई करायी गयी तो. . .बहरहाल मैं भी खुश था कि चलो कुछ तो बात बन रही है। बाग उठाने से जो पैसा मिला था वह खेती में लगा दिया था।

घर पर मुझे तीन ख़त मिले। एक अहमद का ख़त था। पढ़कर मैं हैरान हो गया। उसने लिखा था कि इण्डियन हाई कमीशन, लंदन में

उसकी इन्फ़ारमेशन ऑफीसर के ओहदे पर पोस्टिंग हो गयी है। यह पोस्टिंग मंत्री ने दी है। जाहिर है उसके पीछे हाथ इंदरानी के अंकिल का हाथ ही था। मैं सोचने लगा यार थर्ड क्लास बी.एस-सी. फारेन सर्विस में आ गया और अब मज़े करेगा। यही फायदा है 'कान्टेक्ट्स` का। उसने जोश में आकर मुझे लंदन आने की दावत भी दे

डाली थी। ठीक है अब मैं जा सकता हूं, मेरे पास पैसा होगा। पैसा ज़िंदगी को चलाने वाली गाड़ी का पहिया। दूसरा ख़त शकील का था। उसने लिखा था कि यार भाइयों के तंग करने, कारोबार में हिस्सा न देने और वालिद साहब की लापरवाही का शिकार होने से बचने का एक ही रास्ता मुझे नज़र आया। मैं पॉलीटिक्स में आ गया हूं। मैंने कांग्रेस ज्वाइन कर ली है। अब साले मुझसे घबराते हैं। यहां कांग्रेस के अध्यक्ष आर.के. तिवारी हैं। तुम दिल्ली से उन पर कोई दबाव डलवाकर मुझे युवा कांग्रेस का ज़िला अध्यक्ष बनवा दो तो मज़ा आ जाए। मैं एक-एक को सीध कर दूं। दो अच्छी खबरों के बाद तीसरे खत् में एक बुरी ख़बर थी। अलीगढ़ से के.पी. ने लिखा था, 'जावेद भाई की कैंटीन बंद हो गयी। नए वाइस चांसलर ने कैंटीन का ठेका अपनी पत्नी की सहेली को दे दिया है। कुछ लोग कहते हैं ये तो सिर्फ नाम के लिए है। ठेका वी.सी. की पत्नी को ही मिला है। चार-पांच हज़ार लड़के रोज़ कैंटीन में आते हैं। तुम समझ सकते हो क्या आमदनी होती होगी। जावेद भाई ने बड़े हाथ पैर मारे लेकिन वाइस चांसलर ही नहीं चाहते तो कोई क्या कर सकता है। जावेद भाई का परिवार बड़ा है, दो निठल्ले भाई और उनका परिवार भी जावेद भाई के साथ ही हैं। इसके अलावा उनका अपना परिवार। सौ रुपये रोज़ विल्स सिगरेट और पान का खर्च. . .और जाने क्या-क्या. . .बहरहाल बहुत परेशान है. .यूनिवर्सिटी का घर एलाट कराया हुआ है। आज तक अपना घर नहीं बना सके हैं जबकि पिछले पन्द्रह साल से कैंटीन चला रहे थे।"

मैं सोचने लगा, यार अच्छे आदमी इतने अच्छे क्यों होते हैं कि अपने साथ दुश्मनी करने लगते हैं? जावेद कमाल अपनी तमाम कमियों के बावजूद हीरा आदमी है. . .हर ज़रूरतमंद की मदद के लिए तैयार।

यारों पर जान छिड़कने वाले, धर्म, जाति, राष्ट्र, रंग, नस्ल की सीमाओं से ऊपर. . .अच्छे शायर. . . लेकिन ये अपने आपसे दुश्मनी क्यों करते रहे? हो सकता है यह जानबूझ न की गयी हो अनजाने में हो गयी हो, लेकिन है तो दुश्मनी। जब अच्छे दिन तो रोज़ की कमाई रोज़ उड़ा दी जाती थी। जाड़ों में पाए खिलाने की दावत में पच्चीस-तीस लोगों से कम नहीं होते थे। गाजर का हलुए की दावत अलग होती थी। पान सिगरेट दोस्तों के लिए मुफ्त था। फिल्म दिखाने ले जाते थे तो रिक्शे के किराये से लेकर इंटरवल की चाय तक के पैसे कोई ओर नहीं दे सकता था. . . ये सब क्यों और

इसका क्या मतलब था? पैसा खर्च करना खुशी देता है तो गम़ भी देता है। लेकिन शायद उनके संस्कार ऐसे थे, परवरिश ऐसे माहौल में हुई थी, खानदान ऐसा था जहां पैसे का कोई महत्व न था। जमींदार, जागीरदार पैसे के महत्व को नहीं जानते। अरे क्या जागीर चले जाएगी? ज़मींदारी की आमदनी तो ऐसी धरती है जो कभी बंजर नहीं पड़ती।

पुलिया पर फिर महफ़िलें जमने लगीं। उमाशंकर अपने घर से गोश्त पकवाकर ले आते थे। मुख्त़ार पैजामे में घुसेड़कर अंग्रेजी की बोतल लाता था। पुलिया जो किसी पंचवर्षीय योजना में ऐसे नाले पर बनी थी जो था ही नहीं, बैठने की एक आदर्श जगह थी। न तो इस पुलिया पर से कोई सड़क गुजरती थी और कोई चलता हुआ रास्ता था। दूर-दूर तक फैले खेत थे और उनके पीछे कुछ पुरवे थे। पुलिया पर दरी बिछाकर सब पसर जाते थे। ऊपर खुला आसमान और नीचे खिलता हुआ अंधेरा. . .निपट अंधेरा। इन महफिलों में कलूट भी आने लगा था जो इस बात पर आज तक गर्व करता था कि कलकत्ता में ज्योति बसु के साथ जेल गया था। कलूट का अण्डे मुर्गी का कारोबार ठप्प हो गया था और खर्चा जानवरों की बाज़ार में दलाली से ही चलता था। कलूट के साथ शमीम साइकिल वाला भी आ जाता था। वह पीता न था। उसे मज़ा आता था हम लोगों के लिए छोटे मोटे काम करने में। 'लाला दौड़ के एक बीड़ी का बण्डल लै आओ।` वगैरा. . .इन्हीं महफिलों में दुनिया जहान की बातें होती थीं। राजनीति, मुसलमानों की स्थिति, सोवियत यूनियन, चीन और अमेरिका बहस के मुद्दे बना करते थे।

केसरियापुर में दो महीने तक मुझे लगा था कि मैं बोला ही नहीं हूं। क्या बोल सकता था? बीज, खाद, पानी, पैसा, निराई, गुड़ाई. . .ये क्या कोई 'बात` है? न तो वहां मैं किसी से अपने राजनैतिक विचारों की चर्चा कर सकता था और न अपने साहित्यिक कामों पर बात कर सकता था। इसलिए लगता था कि दो महीने खामोश रहा हूं। इन महफ़िलों में वह कमी पूरा होने लगी। एक दिन बातचीत में उमाशंकर ने कहा "यार साजिद तुम अपनी पार्टी की इतनी तारीफ करते हो. . .तुम्हारी पार्टी का यहां कोई आदमी नहीं है क्या. . .हम लोग भी मिलें. . .देखें।" ये सुनकर मुझे खुशी हुई। उमाशंकर अपने को पक्का कांग्रेसी कहा करता था लेकिन इन महफिलों में हुई बहसों ने उसे विचलित कर दिया है। मुख्त़ार तो मुस्लिम लीग से उखड़ ही चुका था। ताहिर

को राजनीति में रुचि नहीं है। शाहिद मियां की दोस्ती की वजह से इलेक्शन में कांग्रेस का काम कर देता है और एक 'प्रोटेक्शन` भी मिला हुआ है। ख़ैर पता-वता लगाया गया तो आर.के. मिश्र एडवोकेट का पता चला कि वो सी.पी.एम. के जिला सचिव हैं।

दो दिन बाद हम सब एक साथ उनके घर पहुंच गये। बाद में उन्होंने बताया था कि इतने लोग, इस शहर में, पार्टी के नाम पर उनसे मिलने कभी नहीं आये थे। खूब बातचीत हुई। कामरेड मिश्रा ने साहित्य दिया। 'स्वाधीनता` लेने की बातें भी तय हुई। काम क्या हो रहा है यह पूछने पर कामरेड थोड़ा कन्नी काट गये बोले कुछ कामरेड किसान सभा का काम देख रहे हैं। एक दो तहसीलों में अच्छा काम है. . .वगैरा वगैरा. . .तो ये समझते देर नहीं लगी कि शहर में पार्टी का काम है नहीं।

केसरियापुर जाने से पहले एक दिन अचानक बावरचीखाने में सल्लो को बैठा और ऐसा लगा जैसे पूरा वजूद बज उठा हो। सल्लो ने मुझे देखा और मुस्कुरा दी. . .पुराने पन्नों को खोलती और रिश्तों को आधार देती मुस्कुराहट। उसके साथ बिताई रातें उंगलियों के पोरों पर नाचने लगीं। फिर घर में पता चला कि उसके अब्बा को किसी नई मिल में नौकरी मिल गयी जो यहां से दूर है। इसलिए सल्लो और उसकी मां को बुआ के यहां छोड़ा गया है।

सल्लो इस पूरे संसार में अकेली है जिससे मेरे संबंध बने थे। सल्लो को मैंने कहां-कहां याद नहीं किया है। सल्लो मेरे दिलो-दिमाग पर छायी रही है। यह दुबली-पतली औसत कद और सामान्य नाक-नक्शे वाली लड़की चांदनी रात में जब 'बेहिजाब` हुआ करती थी तो सुख के सागर खुल जाते थे। मुझे उससे तन्हाई में इतना कहने का मौका मिल गया कि वह रात में ऊपर आ जाए। वह हंस दी और बोली- "देखेंगे . . . अभी से क्या कह दें।" चेहरे पर तो उसके भी खुशी झलक रही थी।

कोठे वाले कमरे के सामने वाली छत पर मच्छरदानी से घिरा मैं घर के अंदर से आने वाली आवाज़ों पर कान लगाये था। धीरे-धीरे घर का काम करने की आवाजें मद्धिम पड़ती गयीं। धीरे-धीरे अंधेरे के जुगनू जगमगाने लगे और मुझे लगा अब इंतिज़ार की घड़ियां खत्म हुआ ही चाहती है। बगैर किसी आहट के एक परछाईं चलती हुई मेरे पलंग तक आई और मैंने उठकर उसे बिस्तर पर खींच लिया। वह बात करना चाहती

https://www.hindiadda.com/garajat-barasat-part-i/

थी लेकिन मेरे पास कोई शब्द नहीं था सिर्फ शरीर था, हाथ था, आंखें थी, वह तकिये पर सिर रखकर लेट गयी और एक गहरी सांस ली। उसकी गहरी सांस ने मुझे पलट दिया। मेरी जुबान खुल गयी।

"कैसे रहीं तुम?"

"आपको क्या. . .आपने तो पलटकर पूछा तक नहीं।"

"ये मत कहो. . .मैं तुम्हें याद करता रहा।"

"याद करने से क्या होता है. . .अब्बा का रिक्शा ट्रक के नीचे आ गया था। वो तो जान बच गयी. . .यही अच्छा हुआ। चोट भी खा गये थे. . .डिप्टी साहब ने ही इलाज कराया था।"

"तुम गांव चली गयी थीं?"

"हां, जब तक कटाई चलती रही. . .वही अम्मां के साथ जाती थी. . .फिर वहां क्या था. . .वापस आ गये। आप तो साल डेढ़ साल बाद आये।"

"हां मैं जंगल में फंस गया था।"

वह हंसने लगी। देख तो नहीं पाया लेकिन अनुमान लगा लेना आसान था कि उसके दाहिने गाल में हल्का-सा गड्ढा पड़ा होगा। वह जब हंसती है तो यही होता है।

दिल्ली में क्या जंगल हैं।"

"हां बड़ा भयानक जंगल है।" मैं उसे धीरे-धीरे आप बीती सुनाने लगा जो किसी को नहीं सुनाई है। उसके हाथ की उंगलियां मेरे सीने के बालों को सीध करती रहीं। मैं सोचने लगा औरत से बड़ा हमराज़ कोई नहीं हो सकता। अपने बारे में, वह चाहे जीत हो या हार हो, प्रेमिका को बताने और इस तरह बताने कि बातचीत का कोई गवाह न हो सच्चाई का अनोखा मज़ा है। वह सुनती रही और खुलती रही। हम धीरे-धीरे एक दूसरे को महसूस करने लगे। मुझे लगा कि यह संबंध कोई सतही हल्का या केवल सेक्स संबंध नहीं हो सकता। इसमें और भी बहुत कुछ है, क्या है? मैं यह सोचकर डर

गया। वह पता नहीं क्या सोच रही थी। हाथों के स्पर्श ने डर को पीछे ढकेल दिया। चारों तरफ अंधेरी रात की चादर तनी थी और वह कह रही थी कि तुम दोनों को कोई नहीं देख रहा है। ये चक्कर क्या है जो बात हमें मान लेनी चाहिए हम नहीं मानते? जो बातें तय हो जानी चाहिए हम क्यों नहीं करते? पहली बार उसके साथ लगा कि यह ठीक नहीं है लेकिन इस बीच उसकी सांसें तेज़ हो गयी थीं। मैं अपने को रोकना चाहता भी तो नहीं रोक सकता था।

रातभर हम एक सागर में उतरते तैरते और किनारे पर आते रहे। किनारे पर हमारे लिए सवाल थे। इसलिए फिर लहरों के बीच चले जाते थे और आदिम इच्छाओं के संसार में हमें शरण मिल जाती थी। वह साधारण नहीं है। तट पर आकर जो बातें करती है वे अंदर तक उतर जाती हैं। मैं तय नहीं कर पा रहा था कि उससे चलते समय क्या कहूंगा। कचहरी के घड़ियाल ने चार का घण्टा बजाया। वह धीरे-धीरे कपड़े पहनने लगी। अच्छा है कि जाने से पहले उसने कुछ नहीं पूछा। शायद उसे मालूम था कि वह जो कुछ पूछेगी उसका जवाब मेरे पास नहीं है। वह मुझे शर्मिन्दा नहीं करना चाहती थी।

हालांकि शहर में मैं नहीं रहता था लेकिन आना-जाना लगा रहता था। जब भी आता तो पार्टी सेक्रेटरी आर.के. मिश्रा से मुलाकात हो जाती । उन्नाव निवासी मिश्रा जी देखने-सुनने और व्यवहार में खासे पंडित हैं। मस्त हैं, बातूनी है, खाने-पीने के शौकीन हैं, आनंद लेने के पक्षधर हैं काम को बहुत सहजता से करते हैं। गांव में घर ज़मीन है जहां से साल भर खाने लायक अनाज आ जाता है। दस-बीस रुपये रोज़ वकालत में भी पीट लेते हैं। मिश्रा जी कई-कई दिन शेव नहीं कराते। हफ्ते दो हफ्ते में नाई की दुकान जाकर जब शेव बनवा लेते हैं तो उनकी शक्ल बिगड़ जाती है। चेहरे पर जब तक बालों की खूंटियां नहीं निकल आतीं तब तक उनका व्यक्तित्व मुखरित नहीं हो पाता।

मिश्रा जी के माध्यम से दूसरे पार्टी सदस्यों से भी परिचय होने लगा। पंडित दीनानाथ से मिला। पंडित जी स्थानीय पार्टी के प्रवक्ता हैं। पूरे शहर में मार्क्सवाद की 'सुरक्षा` करने की ज़िम्मेदारी उन्हीं पर रहती है। जब कोई किसी पान की दुकान पर मार्क्सवाद पर प्रहार करता है तो बचावपक्ष अंत में यही कहता है कि पंडित जी से बात करो। पंडित जी द्वंद्वात्मक भौतिकवाद पर हिंदी में एक किताब लिखने की भी सोच रहे हैं।

सूरज चौहान पार्टी में हैं, वकालत करते हैं और किसान मोर्चे पर सक्रिय हैं। बलीसिंह लकड़ी का काम करते हैं। पार्टी सदस्य हैं। आक्रामक किस्म का व्यक्तित्व है। पैसे वाले हैं। पार्टी मीटिंगों में चाय-पानी के खर्च का ज़िम्मेदार बनते हैं। 'आबरु` रायबरेलवी भी पार्टी के सदस्य हैं। शहरी मुद्दों और भ्रष्ट अधिकारियों पर शायरी करते हैं। शहर के मुशायरों में स्थानीय शायरों और कवियों में सबसे वरिष्ठ माने जाते हैं। इसके अलावा कुछ ग्रामीण किस्म के सदस्य भी हैं जो किसी गिनती में नहीं आते। उन्हें मिश्रा जी काम बांटा करते हैं।

धीरे-धीरे मैं इन सबके सम्पर्क में आया और मैंने अपनी टीम को मिश्रा जी के हवाले कर दिया। मेरी समझ में नहीं आता था कि पार्टी का काम यहां कैसे आगे बढ़ सकता है? मज़दूर हैं नहीं इसलिए ट्रेड यूनियन का सवाल ही नहीं पैदा होता। किसान सभा बनी हुई हैं पर उसके पास क्या मुद्दे हैं? मज़दूरी का मुद्दा बड़ा संवेदनशील है क्योंकि छोटे किसान तक जो किसान सभा के सदस्य हैं इस मुद्दे पर चुप ही रहते हैं। यह डर रहता है कि इससे बड़ा बवाल खड़ा हो जाएगा। पुलिस उत्पीड़न के मुद्दे ज़रूर हैं पर वे कितने हैं? और व्यापक जन समर्थन का आधार बन सकते हैं या नहीं? मिश्रा जी से इन बातों पर चर्चा होती थी। उनके पास लखनऊ से जो लाइन आती थी, जो शायद दिल्ली से चली होती थी, उसकी बातें करते थे। बहरहाल आंदोलन कैसे शुरू किया या बढ़ाया जाए इसके बारे में हमारे पास कोई जानकारी नहीं थी। सदस्यता बढ़ाने का अभियान ज़रूर चलाते रहते थे।

दूसरा पानी लगने के बाद गेहूं ऐसा फनफना के निकला कि गांव वाले हैरान रह गये। इस ज़मीन में कभी गेहूं तो हुआ ही नहीं था। ग्राम सेवक इसे अपनी सफलता मानते थे। एक दिन कहने लगे साजिद जी आप देखते जाओ एक दिन मैं आपको उत्तर प्रदेश के आदर्श किसान का पुरस्कार दिलवा दूंगा। यहां मुख्यमंत्री आयेंगे।

गांव के बूढ़े किसान फसल देखने आते। कुछ मेरी किस्मत को सराहते और कुछ रासायनिक खाद की तारीफ करते। बटाईदारों में एक बीघा गेहूं किशना और दो बीघा रामसेवक ने लगाया था। उनकी भी फसल अच्छी थी। मुझे लग रहा था कि बस पाला मार लिया। अब अगले साल पूरे चालीस बीघा में गेहूं लगवाऊंगा। लोग ये भी कहते थे कि पैसा गेहूं धन में नहीं है, पैसा तो आलू और घुइयां में है। खड़ा खेत बिक जाता है।

कुंजड़े खरीद लेते हैं। आलू अच्छा हो तो पांच छः हज़ार का बीघा जाता है। ये सब सुनते-सुनते मैं इतना भर गया कि सोचा चलो आलू लगवा कर देखते हैं। खेत की खूब तैयारी होने लगी। ग्राम सेवक आ गये। उन्होंने खाद की ज़िम्मेदारी ले ली। एक 'प्रगतिशील किसान` से बीज खरीदा गया और आलू लग गया।

हर चीज़ या हर काम यहां 'अधिया` पर हो जाता है। खेत ही अधिया पर नहीं जाते जानवरों की देखरेख भी अधिया पर होती है। तलाब में सिंघाड़ा भी अधिया पर लगता है। गोबर से कंडे पाथने का काम भी अधिया पर होता है। नंबरी ने मुझसे कहा था कि मैं अपने जानवरों के गोबर के कंडे पाथने का काम उसके साथ अधिया में करा लिया करूं। मैं तैयार हो गया था। अच्छा है चार पैसे की आमदनी हो जाएगी और पथे पथाये सूखे कंडे जलाने के काम भी आयेंगे।

अगले दिन से अधमैली साड़ियों में परछाइयां शाम ढले आने लगीं और कंडे पाथने का काम शुरू हो गया। अहाते में दूसरी तरह कंडे पाथ कर लगाये जाने लगे और सूखे कंडे दूसरे सायबान में जमा होने लगे। अधमैली, मलगिजी साड़ियों में दो परछाइयां जो आती हैं उनमें एक नंबरी की औरत है और दूसरी नंबरी की लड़की है। नंबरी की लड़की का विवाह हो चुका है। वह अपनी आठ-दस महीने की लड़की को लेकर आती है। लड़की को वह दूसरे सायबान में लिटाया करती थी। एक दिन मैंने कहा कि इसे दूसरे सायबान में मत लिटाया करो। कोई कीड़ा-वीड़ा न काट ले। इस सायबान में जहां मैं बैठता हूं वहां लिटाया करो। अगले दिन से यही होने लगा। नंबरी की लड़की जब अपनी बच्ची को तख्त़ पर लिटाने आती तो मैं उसे ध्यान से देखता। शारीरिक श्रम की वजह से उसका जिस्म हर तरह से सुंदर है। छोटी-सी नाक, छोटी सी आंखें, गोल चेहरा, कुछ ऊपर को उठे हुए गाल इतना आकर्षित नहीं करते जितना शरीर करता है। नपा-तुला, सीधा, मज़बूत, कर्मठ जीता जागता गेहुंए रंग का शरीर जिसकी सच्चाई अधमैली धोती के नीचे से विद्रोह करती रहती है।

रहमत शहर से लौटा तो उसके पास दीगर चीजें तो थीं ही यानी खाला ने चले का हलुवा भेजा था, अम्मां ने नए कुर्ते पजामे भेजे थे लेकिन इनसे कीमती चीज़ यानी एक ख़त था। जहां मैं बात करने को तरस जाता हूं वहां ख़त से लगता था नई ज़िंदगी आ गयी है। जिस दुनिया को छोड़कर, जिसकी रंगीनी से, जिसके अभावों और मज़ों से

मैं वंचित हो गया हूं वे सामने आ गये हैं। लिफाफे पर भेजने वाले का नाम और पता छपा था। पढ़ कर मज़ा आया। मुहम्मद शकील अंसारी, मंत्री युवा कांग्रेस. . .। वाह बेटा वाह, मार लिया हाथ। जल्दी-जल्दी ख़त खोला। ख़त क्या था पूरी दास्तान थी। शकील ने बड़े विस्तार से लिखा था कि उसने यह पद कैसे प्राप्त किया यार मैंने क्या नहीं, सबसे पहले तो शहर काज़ी को पटाया। उनको मस्जिदों के लिए और मदरसों के लिए चंदा दिलाया। उसके बाद अपने पंडित जी से उसकी मीटिंग करायी। काज़ीजी कभी किसी राजनीतिज्ञ से नहीं मिलते हैं लेकिन मेरा दबाव काम कर गया। एक यहां मेरा पुराना स्कूल का दोस्त है जो नेपाल के जंगलों से लकड़ी लाता है। काफी पैसा कमा लिया है उसने। उससे बात करके मैंने पंडित जी के बेटे को एक सेकेण्ड हैंड मोटर साइकिल सस्ते में दिला दी। पंडिताइन को सालभर के लिए गेहूं लगभग आधे दामों में दिला दिया। ये सब पापड़ बेलने पड़े और फिर पंडित जी को बार-बार बताया कि जिले में अंसारी बिरादरी के कितने वोट हैं। बहरहाल किसी तरह पंडित जी काबू में आये तो ठाकुर अजय सिंह बिदक गये। उनको एक प्रभावशाली ठाकुर से ठीक कराया। पर अब समझो लाइन सीधी है। कल ही मैंने इनकमटैक्स इंस्पेक्टर को अपनी दुकान पर भेज दिया था। साले दोनों भाइयों की सिट्टी-पिट्टी गुम हो गयी। मैंने मामला रफ़ा-दफ़ा कराया और भाइयों से कहा कि कायदे से मुझे मेरे हिस्से का मुनाफा देते जाओ नहीं तो जेल चले जाओगे। देखो यार जो लोग मुझे कुत्ता समझते थे, आज कुत्ते की तरह मेरे पीछे घूमते हैं। सौ पचास लौण्डों का एक गिरोह भी मेरे साथ खड़ा हो गया है। जो काम पुलिस से नहीं हो पाता वह काम ये कर देते हैं। अब तो लखनऊ के भी दो-चार चक्कर लगा लेता हूं। दुआ करो कि आगे का काम यानी टिकट मिल जाए े।` मैं खत़ पढ़कर सोचने लगा। शकील ने अच्छा किया या बुरा किया? मेरी समझ में नहीं आया।

शहर गया तो मालूम हुआ कि मिश्रा जी से मेरी मण्डली मिलती रहती है। कलूट को पार्टी का सदस्य बना लिया गया है। आधार यही बना था कि दस साल पहले अपने कलकत्ता प्रवास के दिनों में कलूट ज्योति बसु के साथ जेल गये थे। इतने समर्पित कार्यकर्ता को पार्टी सदस्य क्यों न बनाया जाता लेकिन कलूट ने पार्टी मेम्बर बनने का जो विवरण दिया था वह बहुत अलग था।

कलूट ने बताया कि मिश्रा जी ने कहा कि कचहरी आ जाना वहां फारम भरवाएंगे। जब ये कचहरी गए तो मिश्रा जी ने इनसे कहा कि तुम्हें मालूम है तुम एक आल इंडिया पार्टी के सदय बन रहे हो। तुम संसार के कम्युनिस्ट आंदोलन में शामिल होने जा रहे हैं। इस पार्टी की मेम्बरशिप के लिए तो लोग तरसते हैं। बहुत भाग्यशाली होते हैं जिन्हें मेम्बरशिप मिलती है। तुम्हें एक कार्ड मिलेगा जिसे देखकर अच्छे-अच्छे अधिकारी एक बार चौंक जाएण करेंगे। इस तरह की भूमिका बांधने के बाद मिश्रा जी ने कहा- "कलूट भाई अपनी खुशी में दूसरे कामरेडों को शामिल करो। देखो यहां पंडित दीनानाथ बैठे हैं, सूरज चौहान हैं, आबरु साहब हैं, अब तुम इस बिरादरी में शामिल हो रहे हो।"

"अरे साफ-साफ कहो कि चाय पिया चाहत हो।", आबरु साहब ने मिश्रा जी से कहा।

"अरे चाय हम पीते रहते हैं. . .इस समय. . . र

"जाओ बच्चा सामने माखन हलवाई की दुकान से गुलाब जामुन और समोसा ले आव. . . चाय बोल दियो कि मिश्रा जी के बस्ता म पहुंचा देव।"

"अच्छा तो उन सबने तुम्हें 'काटा`, मैंने पूछा।

कलूट हंसने लगा, "अरे नहीं साजिद मियां. . .ऐसा का है।"

"नहीं ये तो ग़लत है।"

"साजिद भाई . . .ये बेचारा दिन भर साइकिल के पीछे मुर्गियों का ढ़ाबा लिए गांव - गांव का चक्कर काटता है तब कहीं दस-बीस रुपया कमा पाता है।" मुख्तार ने कहा।

"चलो अभी चलते हैं मिश्रा जी के पास", मुझे गुस्सा आ गया।

"नहीं नहीं रहे देव", कलूट ने कहा।

"रहने कैसे दिया जाए", मुख्तार बोला।

"बातें तो इतनी ऊंची-ऊंची करते हैं और हाल ये है", ताहिर ने बीड़ी का दम लगाने से पहले कहा।

मुझे लगा ये सब मुझे घेर रहे हैं। कह रहे हैं यही आपकी पार्टी के आदर्श हैं। यही वे लोग हैं जो गरीबों के लिए पृथ्वी पर स्वर्ग उतार लाएंगे।

मैंने सोचा मिश्रा जी पर सीध हमला करने से पहले ज़रा दूसरे लोगों को भी टटोल लिया जाए। मैं सूरज सिंह चौहान के पास गया, वह काली शेरवानी चढ़ाए कचहरी जाने की ताक में चौराहे पर खड़े थे। मुझे देखकर पान की दुकान की तरफ घसीटने लगे। मैंने उन्हें चायखाने की तरफ घसीटना शुरू किया और हम दोनों चाय पीने बैठ गए। चौहान साहब को पूरी भूमिका बांधकर मैंने पूरा किस्सा सुनाया। वे काफी दार्शनिक-भाव के साथ सुनते रहे। उन्होंने चुप्पी तोड़ी और बोले- "कामरेड तुम तो जानते ही हो कि इस पार्टी में हाईकमान का विश्वास जीतना बहुत कठिन है। पर एक बार किसी का विश्वास जम जाएे तो उसे उखाड़ना और मुश्किल है। मिश्रा ने लखनऊ में अपना विश्वास जमा दिया है। ये जो कलूट के साथ हुआ कोई नई बात नहीं है। मिश्रा ऐसे काम करते रहते हैं। हम लोग लखनऊ में कहते हैं तो डांट उल्टा हमें पड़ती है। कहा जाता है आप लोग ज़िला कमेटी में गुटबंदी कर रहे हैं। जाओ जाकर काम करो एक दूसरे की शिकायतें न किया करो. . .कामरेड मिश्रा तो फिर भी वैसे नहीं हैं। हम बताए आपको सात-आठ साल पहले हमारे ज़िला सेक्रेटरी त्रिभुवन हुआ करते थे। हाई कमान के चहेते। प्रांतीय नेतृत्व की नाक का बाल । लेकिन ज़िला स्तर पर उनकी

बड़ी काली करतूतें थीं। हम लोग जब भी लखनऊ में बात उठा तो यही जवाब मिलते की गुटबंदी न करो। काम करो। अब साहिब पूरी जिला कमेटी. . . एक दो जनों को छोड़कर बड़ी त्रस्त हो गयी। क्या करें क्या न करें। बड़ी मुश्किल से मौका आया। जब सी.पी.एम. का विभाजन हुआ तो हमारे जिला सेक्रेटरी ने बैठक बुलाई। हमें मालूम था कि उनके रुझान नक्सली हैं, उन्होंने हम सबसे पूछा कि बताओ क्या करें? सी.पी.एम. में रहे या नक्सली हो जाए। हम लोगों ने कहा कामरेड आप हमारे नेता हैं। जो आप निर्णय लेंगे वही हमारा भी फैसला होगा। कामरेड ने कहा- ठीक है हम सी.पी.एम.एल. में चले जाते हैं। अगले दिन उन्होंने अखबार में छपवा दिया। हम तीन ज़िला कमेटी के

मेम्बर अखबार लेकर लखनऊ गये और प्रांतीय नेताओं से पूछा कि हम लोग क्या करें? हमारे कामरेड सेक्रेटरी तो नक्सली हो गये हैं? हमसे कहा गया लखनऊ से किसी को भेजा जाएगा। आप लोग जिला कमेटी की मीटिंग करें और नया सेक्रेटरी चुन लें। तो इस तरह त्रिभुवन से हमारा पीछा छूटा। अब कामरेड मिश्रा ये सब हरकतें करते हैं। आपको मालूम नहीं, ये उन किसानों से ज़्यादा फीस वसूल करते हैं जो पाटी के हमदर्द हैं। मतलब हम जान-जोखिम में डालकर लोगों को पार्टी के पास लाते हैं और मिश्रा जी उन्हें भगा देते हैं, क्या किया जाए?``

केसरियापुर लौट आया तो बिन्देसरी फिर दिखाई पड़ने लगी। कभी अकेली और कभी मां के साथ। जब अकेली होती और मेरे पास कोई बैठा न होता तो किसी बहाने से मैं उसे बुला लेता। लेकिन डर भी लगता कि यार चारों तरफ से खुला घर है। रहमत और गुलशन आते रहते हैं। कहीं कोई देख न ले। लेकिन दिल है कि मानता नहीं। एक आद मौका देखकर कुछ लाने के लिए उसे कमरे में भेज चुका हूं और उसके पीछे-पीछे मैं भी गया हूं। जल्दी में जो कुछ हो सकता है उस पर उसने कभी एतराज़ नहीं किया है। अब तो बस मौके की बात है और मौका कैसे, किस तरह, कहां, कब? मेरे ख्य़ाल से मेरी इस मजबूरी को

बिन्देसरी भी समझती है और उसने साबित कर दिया कि मुझसे ज़्यादा समझदार है।

एक दिन खाना खाने के बाद दोपहर को मैं लेटा था कि बिन्देसरी का भाई राजू आ गया। वह गांव के ही स्कूल में कक्षा चार में पढ़ता है। उसने कहा- बाबू जी और अम्मां न्योते में गये हैं। बाबू कह गये हैं रात में आप हमारे घर सो जाना। दीदी डरात है।

"रात में आ जाना. . .मुझे तुम्हारा घर नहीं मालूम है. . .देखा तो है पर. . ."

"आ जइबे।" वह चला गया।

मोटी खेस ओढ़े, रात के अंधेरे में गांव की गलियों से होता मैं नम्बरी के घर पहुंचा। छप्पर के दोनों तरफ टट्टियां लगीं थी। बीच से जाने का रास्ता था, सामने दरवाज़े के अंदर रौशनी थी। मैं अंदर आ गया कच्ची साफ सुथरी ताक पर एक दिया जल रहा था जिसकी रौशनी में लिपी-पुती कच्ची दीवारों का असमतल स्वरूप रौशनी में

कलात्मक छबियां बना रहा था। कुछ देर बाद वह आई, अपनी बच्ची को सुला रही थी। मैंने उसे अपने पास बुलाया।

"आज कचर लेव जितना कचरे का है।" वह बोली और साथ लेट गयी।

"रात में ये उठती तो नहीं।"

राजसेरी?

हां।

उठती है, जब भूख लगती है।

मैं कुछ चिंता करने लगा।

"तुम्हें देख के डर न जाएगी", वह हंसी।

"सुसराल में तुम्हारा झगड़ा है", मैंने सुना था कि ससुराल वाले उससे खुश नहीं हैं।

"झगड़ा कुछ नहीं है. . .एक दीया से पूरे घर में उजाला कैसे

हो सकता है", वह बोली।

"क्या मतलब?"

"हमारा छोटा देवर हम को चाहत रहे. . . हम कहा चलो ठीक है. . .छोटे भाई हो हमरे आदमी के . . .छोटे को देखा-देखी जेठ जी भी ललचा गये. . . समझे बहती गंगा जी है. . . हम मना कर दिया . . .घर का पूरा कामकाज जेठजी करते हैं. . .खेती बाड़ी. . ."

"जेठ की शादी नहीं हुई है?"

"उनकी औरत कौनों के साथ भाग गयी।"

"तो जेठ जी तुम्हारे साथ. . ."

"हां, पर हमका अच्छे नहीं लगते।"

"क्यों?"

वह कुछ नहीं बोलती।

"चिन्हारी देवर, वह मेरा हाथ पकड़कर बोली। मैं चुप रहा।

"चिन्हारी नहीं जानते।"

"जानते हैं मतलब पहचान. . ."

"मान लेव रात हो. . .हमारे पास आओ. . .तो चिन्हारी देखके समझे न कि तुम हो?"

आहो, ये बात है ख़ासी भोली-भाली ख्वाहिश है। मासूम इच्छा। पता नहीं कितने समय से यहां प्रेमियों में इसका रिवाज होगा।

"पहले अपने चिन्हारी दोर, मैं बोला।

"खोज लेव", वह आहिस्ता से बोली और उठकर दीया बुझा दिया।

गेहूं में जिस दिन चौथा पानी लगाया गया उसी दिन रात में अचानक बादल घिर आये। रहमत परेशान हो गया। बोला, "पानी न बरसा चाही।"

मुझे भी जानकारी थी कि पानी बरस गया तो फसल बर्बाद हो जाएगी। लेकिन हमारे चाहने से क्या होता। रात में करीब दो बजे तेज़ बारिश शुरू हो गयी और सुबह चार बजे बोरा ओढ़े और फावड़ा लिए

रहमत आ गया। वह खेतों से पानी निकालने के लिए मेड़े काटने जा रहा था। मैं उसके मना करने के बाद भी उसके साथ बाहर निकला। रास्तों में पानी भरा था। जूते हाथ में ले लिए पजामा उड़स लिया और हम खेतों की तरफ बढ़े। अब भी हलकी-हलकी बारिश हो रही थी। पौ फटने का उजास फैल रहा था। खेतों में पानी भरा था। गेहूं की लहलहाती फसल सीने तक पानी में डूबी हुई देखकर मैं घबरा गया।

कोई एक घंटे तक रहमत मेड़ों को काटता रहा। लेकिन चूंकि यह ज़मीन धनही थी यहां धन लगाया जाता था इसलिए पानी के निकास का रास्ता न था। खेतों से मिला

तालाब था और दूसरी तरफ ऊंची जमीन थीं दूर-दूर से पानी इधर आकर भर गया था। मुझे लगा कि पानी रोकने के लिए मेड़ तो पहले बनाई जानी चाहिए थी। रहमत का कहना था कि चार पांच गांव का पानी यहां जमा हो जाता है। मेड़ टूट जाती। यहां तो एक बड़ा नाला होना चाहिए जो इस पानी को आगे बड़े नाले तक जोड़ दे और नाला बनवाना आसान नहीं है। पता नहीं कितने किसानों की ज़मीन बीच में पड़ती है और फिर उस पर हज़ारों रुपयों का खर्च आयेगा सो अलग। बहरहाल, अब तो कुछ नहीं हो सकता। मैं छः महीने की मेहनत, हज़ारों रुपयों और अनगिनत सपनों को पानी में तैरते देखता रहा।

"चौथा पानी न लगाया होता तब भी ठीक होता", रहमत बोला।

"अब क्या हो सकता है. . .चलो वापस चलें।"

"अब भइया तगड़ी धूप निकल आये और पानी रुक जाए तो कुछ बात बन सकती है", वह बोला।

पानी, धूप, पाला, कीड़ा. . .धूप निकलने का क्या महत्व है। कितनी ज़रूरी है धूप. . .और वह भी आज ही निकले। कहीं झड़ी लगी रही तो क्या होगा?

करीब ग्यारह बजे झड़ी रुकी लेकिन बादल छाये रहे। मैं यह अंदाज़ा लगाने की कोशिश करता रहा कि दस बीघे ज़मीन में लगाया गेहूं कितना बर्बाद हो गया। पैदावार कितनी होगी और आमदनी कितनी होगी। कितने हज़ार की खाद, बीज, ट्यूबवेल, डांगर की जोड़ी, हलवाहा. . .कुछ तस्वीर साफ नज़र नहीं आई।

इस बारिश से गांव के सब ही लोग दुखी थे। सोचते थे कि पानी बरसने के बाद कीड़ा लगने की संभावना बढ़ जाती है। मुझे यह ख्याल आया कि यार मैं तो पहली बार इस तनाव को झेल रहा हूं लेकिन ये लोग तो जीवनभर झेलते हैं। पीढ़ी दर पीढ़ी झेलते हैं और अगर कभी मिलता भी है तो क्या? यह ज़ाहिर है इनके रहन-सहन से दिल्ली में एक छोटे दुकानदार का जीवन कितना शानदार होता है उसकी तुलना तो यहां बड़े से बड़े सम्पन्न किसान से नहीं हो सकती। यह गांव अकेला नहीं है। पता नहीं सैकड़ों, हज़ारों, लाखों ऐसे गांव हैं, ऐसे लोग हैं, ऐसा जीवन है। इनके साथ समस्या क्या है?

क्या पैदावार का सही दाम नहीं मिल पाता? क्या ये उस विशेष श्रेणी में नहीं आते जिन्हें 'राज्य` संरक्षण देता है? फिर ये खेती क्यों करते हैं? और क्या कर सकते हैं? और क्या जानते हैं? मतलब अगर कुछ और करने की सुविधा हो तो क्या ये लोग खेती नहीं करेंगे? क्या ये गांव छोड़ सकते हैं? क्या यहां के रहन-सहन से अलग हो सकते हैं? शायद नहीं या शायद हां।

तंग आकर शहर आ गया। अब्बा को मेरी परेशानी पता चली तो कहने लगे- "भई ये तो होता है। आज गरम तो कल नरम. . .खेती इसी का नाम है। देखो अल्लाह ने चाहा तो फायदा ही होगा।"

शहर में मेरे पहुंचते ही चौकड़ी जमा हो गयी। मिश्रा जी के व्यवहार से ये सब दुखी तो थे लेकिन संगठन में काम करने ओर उसकी ताकत पहचानकर खुश भी थे। कामरेड बली सिंह मछुआरों का संगठन बना रहे थे जिसमें उमाशंकर लग गया था। गरीब मछुआरे मछली पकड़ते थे और ठेकेदार उनसे कौड़ियों के भाव मछली खरीदकर कलकत्ता भेज देता था। होता तो यह था कि जब कलकत्ता से ठेकेदार को पैसा मिल जात था तब मछुआरों का भुगतान होता था। मछुआरों को भी कर्ज, उधर देकर बंधुआ बनाने की प्रथा बढ़ रही थी।

नदी के किनारे मछली ठेकेदारों में कभी-कभी "फौजदारी तक हो जाती हैं। सज्जन दादा शहर के सबसे बड़े मछली ठेकेदार हैं। लठैत उनके साथ रहते हैं, दो-चार बंदूकधारी आगे पीछे चलते हैं। ट्रक उनके अपने हैं। अफसरों, वकीलों से जान पहचान है। शहर में उनसे मुकाबला करने के बारे में कोई सोच भी नहीं सकता लेकिन जब बली सिंह ने पार्टी बैनर के साथ उन्हें ललकारा तो उमाशंकर को मज़ा आ गया। बली सिंह के पीछे पार्टी ही नहीं है उनकी अपनी भी ताकत है। ज़िले के बड़े ठाकुर परिवार से है। खानदान में दो दर्जन दोनाली हैं।

मछली वाले आंदोलन के साथ मुख्तार और कलूट को सिलाई मज़दूर यूनियन बनाने का काम सौंपा गया है। शहर में तीन-चार सौ सिलाई मज़दूर है जिन्हें बहुत कम मज़दूरी मिलती है। दुकान मालिक कहते हैं, छोटा-शहर है, लोग ज्यादा सिलाई दे नहीं सकते। मुख्तार कहता है, चीज़ों के दाम बढ़ जाते हैं तो शहर वाले दे देते हैं, सिलाई के

नए रेट क्यों न देंगे? पिछले पन्द्रह साल से कौन-सी चीज़ है जिसके दाम नहीं बढ़े? सिलाई मज़दूर भी उन चीज़ों को खरीदता है तो जनाब उसकी मज़दूरी तो बढ़ नहीं रही। ख़र्चे बढ़ रहे हैं। आप क्या चाहते हैं वह मर जाए?

इन दोनों ने एक दिन में यूनियन के पचास मेंबर बना दिए तो मिश्रा जी चकरा गये। दरअसल जो कुछ हो रहा है उसका पूरा 'क्रेडिट` तो मिश्रा जी को ही मिल रहा है। अकेले में ताल ठोंकते रहते हैं। हर सप्ताह रिपोर्ट लखनऊ जाती है। वहां से वाह-वाही होती है। लखनऊ में कलूट और मुख्तार को कौन जानता है।

शहर का माहौल गर्माया हुआ है। नुक्कड़ बाज़ार का नाम लाल बाज़ार रख दिया गया है क्योंकि यहां के सभी दुकानदार पार्टी को चार आने महीने चंदा देते हैं और अपनी दुकानों पर लाल झण्डा लगाते हैं। मिश्रा जी लखनऊ से हंसिया हथौड़ा के 'बैज` ले आये हैं। कार्यकर्ता इन्हें अपने कुर्तों पर लगाते हैं।

गांव में मेरा भविष्य रहा है। एक बार दिल्ली में अपने भविष्य को खोकर मैं नहीं चाहता था कि बार-बार भविष्य मेरे हाथ से फिसलता रहे। मुझे पता हैं। कि खेती बाड़ी-बाग-बगीचा पर मैं आश्रित हूं और इसमें इतनी मेहनत की है, इतना वक्त लगाया है, इतना ध्यान दिया है कि उस पर मेरा दारोमदार है लेकिन शहर में जो कुछ हो रहा है उससे भी मुझे जज्बाती लगाव है। मैं देख रहा हूं कि 'कुछ` हो रहा है। वे मुंह जो बंद रहे हैं, जिनके खुलने की कोई कल्पना भी नहीं कर सकता था, खुल रहे हैं। वे आंखें जो हमेशा नीचे की तरफ देखती थीं। अब सामने देख रही हैं। खाक़ी वर्दी वालों को देखकर जिनकी जान सूख जाए करती थी वो अब गर्व से सीना ताने पुलिस चौकी के सामने से निकल जाते हैं। मैं बेचैन होकर गांव से यहां आ जाता हूं क्योंकि यहां 'ये` लोग मुझे देखते ही उत्साह से भर जाते हैं। हालांकि मैं हूं क्या?

खेती का काम उलझता जा रहा था। कई लोगों ने मुझसे बताया था कि जिस आदमी से मैंने आलू का बीज लिया है वह धोखेबाज़ है और घटिया बीज देता है। पर अब हो क्या सकता था। वैसे आलू जगा बढ़िया था। खेत देखकर लोगों की बात पर विश्वास नहीं होता था। हर साल बाग तीन हज़ार में उठता था। मैंने पता लगाया था कि दरअसल मार्केट रेट के हिसाब से बाग को कम से कम दस हज़ार में उठना चाहिए

लेकिन इलाके के कुंजड़े में बहुत 'एका` होने की वजह से दूसरे कुंजड़े नहीं आते और हर साल उसी कुंजड़े को बाग देना पड़ता है जिसे पिछले दस साल से दिया जा रहा है। रहमत ने यह भी बताया कि अगर कोई बाहर का आदमी बाग लेगा तो उसे कुंजड़ा बिरादरी बहुत परेशान करेगी। अब एक रास्ता बचता है कि बाग न उठाया जाए। खुद ही तकाई करायी जाए और फल बाज़ार में बेचा जाए। यह काम बहुत झंझट वाला है। बाग में रात-दिन कौन रहेगा? आसपास के गुण्डे बदमाशों से कौन निपटेगा? पाल कहां रखी जाएगी? बाज़ार में कहां किस तरह बेचा जाएगा? बाग की तकाई इतना टेढ़ा काम है कि लोग आसानी से तैयार नहीं होते। अब हुआ यह कि एक कुंजड़ा आया जो तीन हज़ार की जगह साढ़े तीन हज़ार देने पर तैयार था। मैंने उसे बाग दे दिया। बाद में पता चला कि ये तो हाजी कुंजड़े का दामाद है जो पिछले दस साल से बाग लेते आये हैं। मतलब हाजी कुंजड़े ने नया खेल-खेल दिया। बाग उन्हीं के पास रहा। मैं बेवकूफ़ बना दिया गया। मुझे शक हुआ कि रहमत भी इस खेल शामिल है। उसे ज़रूर पता था कि नया कुंजड़ा दीन मुहम्मद हाजी जी का दामाद है लेकिन उसने मुझे नहीं बताया।

बिन्देसरी प्रसंग एक अत्यंत खतरनाक और नाटकी मोड़ ले कर खत्म हो गया। हुआ यह कि उसके घर रात बिताने के बाद मैं अक्सर उसे रात में अपने यहां बुला लिया करता था। अब मुझे लगता था कि उसके माता-पिता ये जानते थे कि वह रात में कहां जाती हैं। वजह यह है कि नंबरी यानी बिन्देसरी के पिता का व्यवहार बदल रहा था। वह जब भी आता कोई न कोई चीज़ किसी बहाने से ले जाता। कभी मिट्टी के तेल की एक बोतल, कभी एक आद टोकरा सिंघाड़े, कभी दो-चार किलो अरहर वगैरा। मैं जानता था कि यह क्यों हो रहा है। इसके साथ-साथ मैंने रहमत के लड़के गुलशन को अपना राज़दार बना लिया था क्योंकि रात में वह चौरे पर ही सोता था। गुलशन उस वक्त तक फाटक पर बैठा रहता था जब तक बिन्देसरी मेरे पास रहती थी। मेरे ख्य़ाल से इंतिजाम और व्यवस्था पक्की थी। बिन्देसरी शादीशुदा है अगर कुछ ऊंच-नीच हो भी जाती है तो कोई डर नहीं है। वह काफी तेजी से खुल जाती थी और गांव की दूसरी लड़कियों के प्रेम प्रसंग भी बताती थी। मुझे हैरत होती थी कि ऊपर से देखने पर बहुत गठी हुई, व्यवस्थित, मर्यादित, संस्कारों और रीति-रिवाजों पर चलने वाली गांव की जिंदगी अंदर से कितनी उन्मुक्त है और स्त्री-पुरुष संबंधों ने जाति-बिरादरी की दीवार को किस तरह तोड़ दिया है। रात में जाति बिरादरी बदल जाती है।

कोई दो तीन महीने बाद एक दिन रात में बिन्देसरी चौरा में थी। उसके माता-पिता कहीं न्यौते में गये थे। अचानक रात में तीन बजे के करीब गांव में उसके भाई की आवाजें गूंजने लगीं। वह 'दीदी` 'दीदी` कहकर ज़ोर ज़ोर से चिल्ला रहा था। यह आवाज़ सुनते ही मैं डर गया। बिन्देसरी ने कपड़े पहने और घर की तरफ भागी। बाद में पता चला कि बिन्देसरी चौरे से गांव की तरफ जा रही थी और बीस पच्चीस लोग लाठियां लिए चौरे की तरफ आ रहे थे। बिन्देसरी के भाई ने बता दिया था कि वह चौरे गयी है। बात साफ हो गयी थी। क्षण भर में गांव में खबर फैल गयी थी और रात के तीन बजे 'उजाला` हो गया था। कई लोगों ने कहा था कि यह गांव की लड़की की इज्जत का सवाल है। हमें चुप नहीं बैठना चाहिए और एक गिरोह चौरे की तरफ चल पड़ा था। रास्ते में उन्हें बिन्देसरी मिली तो उसने बताया कि वह तो टट्टी गयी थी। उसके इस बयान पर टोली एकमत नहीं हो पायी कि उन्हें चौरे जाना चाहिए या नहीं। इस तरह चौरे तक कोई नहीं आया।

बिन्देसरी का भाई उसके लिए रात में इसलिए गुहार मचा रहा था कि बिन्देसरी की लड़की उठ गयी थी और लगातार रो रही थी। भाई जब बहुत परेशान हो गया तो गुहार लगानी शुरू कर दी थी।

अगले दिन सुबह ही सुबह यादव पहलवान आये। उन्होंने बताया कि पूरा गांव इस बात से उत्तेजित है। ये अगर किसी अहीर की लड़की का मामला होता तो कल रात चौरा पर चढ़ाई हो गयी होती। लड़की बापू-महतारी की सौगंध खाकर कह रही थी कि टट्टी गयी थी। किसी तरह लोग दब गये। यादव पहलवान ने यह भी साबित किया कि लोगों को ठण्डा करने में उन्होंने भी बड़ी भूमिका निभाई है लेकिन मामला दब नहीं रहा । कुछ प्रभावशाली लोग, बड़े किसान जो पिछले पच्चीस-तीस साल से डिप्टी साहब के चक और बाग पर निगाहें गड़ाये हैं, यह चाहते हैं कि मैं यहां से भाग जाऊं। चौरा में आग लगा दी जाए और डिप्टी साहब तंग आकर औने-पौने ज़मीन और बाग बेच दे। गांव में उनको छोड़कर किसके पास पैसा है, वही खरीद लेंगे। यह बात तो मुझे मालूम थी कि कुछ लोग अब्बा की ज़मीनों पर दांत लगाये बैठे हैं।

मेरे चेहरे पर हवाइयां उड़ने लगी। योजना बिल्कुल पक्की लगी या कम से कम मेरा बहिष्कार तो हो ही सकता है। बदनामी हो सकती है। फिर मैं यहां कैसे रह पाऊंगा।

लड़के हंसेंगे। जवान उंगलियां उठायेंगे। बूढ़े दबी ज़ुबान से चर्चा करेंगे। यादव पहलवान ने जब देखा कि मैं पूरी तरह चित्त हो गया हूं तो बोले "पर एक रास्ता है?"

"क्या?" मैंने निराशा और बेसब्री से पूछा।

"लौण्डिया की आश्नाई आपसे नहीं गुलशन से रही है. . ."हमत का लड़का गुलशन। वह भी तो यहीं चौरा में सोता है।"

मैं खुशी से उछल पड़ा। एक बार फिर 'कन्विन्स` हो गया गांव के बे-पढ़े लिखे लोग जिन्हें हम जाहिल कहते हैं, पढ़े-लिखे लोगों से कहीं ज्यादा समझदार होते हैं।

"बिलकुल ठीक कह रहे हो पहलवान।"

"तो देर न करो. . .अभी साले के पांच दस थप्पड़ लगा देव। गरिया देव. . .पूरा गांव देख ले. . .मामला सांत पड़ जाएगा।"

कुछ भी क्षण बाद चौरा के फाटक के सामने खड़ा होकर मैं चीखने लगा, "पकड़ लाओ साले को. . .आज मैं बताऊंगा कि किसी की बहू बेटी के साथ मस्ती मारने के क्या मिलता है। मादरचोद ने चौरा को बदनाम कर दिया।" मेरे ऊँची आवाज़ों के साथ यादव पहलवान की गरजती आवाज़ भी शामिल हो गयी। लोग जमा होना शुरु हो गये। यादव पहलवान अपनी "फौलादी गिरफ्त में गुलशन को गर्दन से पकड़ कर लाये और मेरे सामने धक्का देकर गिरा दिया। मैंने उसे दो ठोकरें मारी, वह खड़ा हुआ तो थप्पड़ों की बारिश शुरु हो गयी, गालियों का फव्वारा तो उबल ही रहा था। गुलशन हैरान और परेशान था। उसे बोलने तक का मौका नहीं देना है, यह मैं अच्छी तरह जानता था। इसलिए मार-पीट और गाली गलौच में एक सेकण्ड का अंतराल भी नहीं आ रहा था। मारते-मारते मैंने कहा- आज मैं इस साले को भूखा मार डालूंगा। चल बे तुझे कोठरी में बंद करता हूं. . .पहलवान मेरा इशारा समझ गया। उसने फिर गुलशन की गर्दन पकड़ ली और उसे चौरे के फाटक के अंदर ढकेल दिया। वह सामने जाकर गिर पड़ा। मैंने फाटक बंद कर लिया। आगे बढ़कर गुलशन को उठाया, उसे साथ अंदर लाया। कांपते हुए हाथों से उसे एक गिलास पानी और गुड़ की आधी भेली दी। वह

आश्चर्य से मेरी तरफ देखने लगा। जब वह पानी पी चुका तो मैंने जेब से सौ का नोट निकालकर उसे दे दिया। वह और ज्यादा हैरान हो गया।

बिस्तर पर गिरकर मैं हांफने लगा। मुझे यकीन था कि यह मार और गालियां गुलशन को नहीं मुझे पड़ी हैं।

उसी दिन शाम को नंबरी आये और अपने ख़ास अंदाज़ में बोले- "ग़लती हमारी है। बेटी जब बहू बन जाती है तो उसे ससुराल में ही रहना चाहिए और ससुराल में सबको प्रसन्न रखना, सबकी सेवा करना उसका धर्म है।"

सबकी 'सेवा` का अर्थ मैंने यह निकाला कि बिन्देसरी का जेठ उससे जो शारीरिक संबंध चाहता है, उसे बना लेना चाहिए, विरोध नहीं करना चाहिए।

अगले दिन बिन्देसरी ससुराल चली गयी और इस प्रसंग का अंत हो गया। लेकिन मैं हमेशा गुलशन का आभारी रहा। यादव पहलवान का कृतज्ञ रहा।

अप्रैल की एक गर्म दोपहर थी और गेहूं कटने में कुछ ही हफ्ते बचे थे कि केसरियापुर में अचानक कामरेड लाल सिंह नमूदार हुए। न कोई सूचना, न कोई संदेश, पर कामरेड का हुलिया बदल गया था। साफ सुथरे कायदे से सिले कपड़े, हाथ में चमड़े का एक महंगा ब्रीफकेस, आँखों पर काला चश्मा, जेब में सफेद रुमाल देखकर कह नहीं सकता कि खुशी हुई या नहीं। मैंने कामरेड लाल सिंह को पांच साल पहले जब जावेद कमाल की कैंटीन में पहली बार देखा था तो कुछ ऐसा तरंगित हुआ था। वह एक ऐसा समर्पित क्रांतिकारी था जिसके सामने मार्क्सवादी बुद्धिजीवी घिघियाने लगते थे। उसके एक-एक शब्द को आदेश मानते थे और उस जमाने में कामरेड के कपड़े ऊल-जलूल हुआ करते थे। 'भेंट` की गयी ढीली-ढाली कमीज़। पैजामा जैसा पैण्ट लेकिन चेहरे पर एक ऐसा भाव जो साधारण तो बिल्कुल नहीं था। लगता था तपा हुआ सोना है उसका चेहरा। लगता सौ झूठे प्रमाण और थोथे तर्क उसके चेहरे से टकराकर शीशे की तरह छन्न से बिखर जाएगे।

पिछले पांच साल आंखों के सामने से फिसल गये. . .कामरेड लाल सिंह को देखकर खुशी होने के कई कारण हैं। हम दोस्त हैं। काफी समय साथ-साथ बिताया है। इस

गांव में बातचीत करने वाला कोई आया ये तो सौभाग्य की बात है। कामरेड हाथ मुंह धोने और खाना-वाना खाने के बाद सिगरेट के लंबे-लंबे कश लेते हुए बोले "भाई मैं पार्टी क्लास में बनारस गया था। उससे पहले लखनऊ में प्रांतीय सम्मेलन था। उससे ठीक पहले आजमगढ़ में एक बड़ी जनसभा में भी भाग लेना था।"

"कुल मिलाकर बताओ, कितने दिनों से बाहर हो।"

"बीस बाईस दिन तो ही गये हैं", कामरेड बोले।

"उससे पहले भी तुम शायद दिल्ली में थे?"

"नहीं हरियाणा में था. . .पंद्रह दिन क्लास ले रहा था।"

"ओर उससे पहले?" मेरे इस सवाल पर वह चौंक गया। उसे लग गया कि मैं 'खिंचाई` कर रहा हूं।

"तुम कहना क्या चाहते हो?" उसका स्वर बदल गया।

"नाराज़ मत हो कामरेड. . .मैं कहना चाहता हूं कि तुम नेता हो गये हो, कार्यकर्ता साला एक जगह रहता है और नेता भगवान की तरह सब जगह होता है", मेरे कहने पर कामरेड दांत पीसने लगे।

"तुम्हारी शरारत वाली आदत गयी नहीं।"

"तुम्हें देखते ही जाग जाती है।"

"मजाक छोड़ो ये बताओ यहां कैसा चल रहा है?"

"ठीक है कामरेड. . .खेती में जमने की कोशिश कर रहा हूं।"

"चलते टाइम यहां से चावल ले जाऊंगा।"

"हां कामरेड जितना चाहो ले जाना, घान की यहां कमी नहीं है।"

दायें और बायें लाठियां लिए रहमत और गुलशन हैं। बीच में मैं और कामरेड हैं। गांव की गलियों में खेलते बच्चे और लंबे घूंघट निकाले बहुएं हमें जिज्ञासा से देख रहे हैं। कामरेड ने काला चश्मा लगा रखा है और हाथ में एक छोटा ब्रीफकेस है।

रात में ही कामरेड ने कहा था कि गांव के सर्वहारा से मिलना चाहते हैं। इसलिए हम कंजड़ों के डेरे की तरफ जा रहे हैं। डेरे में हम सीधे रामसेवक के घर के सामने आ गये। रामसेवक ने बाहर चारपाई डाल दी। आसपास के घरों से दूसरे कंजड़ भी निकल आये। हम दोनों चारपाई पर बैठ गये। कंजड़ सामने जमीन पर उकड़ूं बैठ गये। कामरेड के बहुत कहने पर भी कंजड़ चारपाई पर नहीं बैठे। वे ज़मीन पर ही बैठे रहे। कामरेड ने बातचीत शुरू करने से पहले कंजड़ों से उनके हालचाल पूछे। भूमिहीन कंजड़ों ने अपना पूरा दुख दर्द बताया। कामरेड ने उनसे कहा कि बिना संगठित हुए इन समस्याओं का समाधान नहीं हो सकता। रामसेवक बोला- "आप बिल्कुल ठीक कहते हो साहब. . .अकेला आदमी क्या कर सकता है?"

"तो आप लोग संगठन बनाने को तैयार हैं?"

"हां जी बिल्कुल हैं, कई आवाज़ें आयी।"

"और देखिए संगठन को विचारधारा से लैस होना चाहिए. . .मतलब आप जो करें वह सबके हित में हो।"

"हां जी हां" कई आवाजें आयी।

"एक बात और समझ लो दोस्तों. . .हक मांगने से नहीं मिलता। उसके लिए संघर्ष करना पड़ता है. . .कुर्बानियां देनी पड़ती हैं।"

"हां जी हां. . . वो तो है। हम तैयार हैं।"

"आपकी विचारधारा क्रांतिकारी होनी चाहिए. ..समझौतावादी नहीं।"

"हां जी हां, साहब आप जैसा कहेंगे वैसा होगा।" रामसेवक ने कहा।

"संगठन बनाने के लिए कुछ जानना-समझना भी ज़रूरी होगा।"

"बिलकुल होगा जी. . .उसके बिना कैसे काम चलेगा", एक कंजड़ बोला।

"हम तो आपके पीछे हैं साहब. . .जहां कहेंगे. . .जो कहेंगे. .करेंगे. . .हमारी बिरादरी में बड़ी एकता है", दूसरे कंजड़ ने कहा।

"आप हमें रास्ता दिखाओ साहब", रामसेवक बोला।

"आप आ जाओ तो बस. . . सब हो जाएगा।"

अनौपचारिक बैठक कोई घंटेभर चलती रही। कामरेड बहुत प्रसन्न हो गये।

रात में खाने के बाद उन्होंने कहा "यार साजिद यहां तो काम करने की बड़ी संभावना है।"

"हां वो तो है।"

"तो यार करो. . .काम।"

"कामरेड मुझसे जो हो सकता है कर रहा हूं। किसान सभा के काम का मुझे तजरुबा नहीं है।"

"करो यार. . .देखो लोगों में कितना उत्साह है।"

"तुम क्या समझते हो . .इन लोगों ने जो तुमसे कहा वह सच है? मतलब साफ बात की तुमसे?"

"हां. . .क्यों।"

"कामरेड. . .ये लोग हमसे तुमसे ज्यादा समझदार हैं।"

"क्या मतलब है तुम्हारा?"

"वे जानते हैं तुम मुझसे मिलने पता नहीं कहां से आये हो। अब यहाँ पता नहीं तुम आओगे भी या नहीं. . .वे तुम्हारी बात क्यों काटते? तुम्हारी हां में हां मिलाने में उन्हें क्या दिक्कत हो सकती है। तुम्हें याद होगा कि वे इस बात पर ज़ोर दे रहे थे कि

'आपके` पीछे-पीछे चलेंगे। अरे जब आप ही यहां न होंगे तो किसके पीछे जाएंगे? और जाहिर है तुम यहां आकर रहोगे नहीं. . ."

"तुम्हारा मतलब है वे झूठ बोल रहे थे?"

"झूठ और सच की बात मैं नहीं कर रहा हूं। मैं कर रहा हूं गरीबी और अभाव ने इन्हें बड़ा व्यावहारिक बना दिया है।"

कुछ देर तक बातें होती रहीं फिर कामरेड के खर्राटे गूंजने लगे।

पार्टी के सदस्यता अभियान ज़ोरों पर है। जिन लोगों ने पिछले छ: सात महीने काम किया है वे सब मेम्बर बन रहे हैं। मुझसे मिश्रा जी ने कहा कि आप भी फार्म भर दीजिए। मैं सोचता रहा। इतने साल अलीगढ़ में मेम्बर नहीं बना। कामरेड लाल सिंह का आग्रह टालता रहा। अब बन जाऊं? मेरी उस धारणा का क्या होगा कि पार्टी सदस्यता जकड़ लेती है आदमी को। काम करने के बजाये गुटबंदी होने लगती है। बहरहाल मैंने फार्म भर दिया। मेम्बर वाले फार्म लखनऊ चले गये। सिलाई मज़दूर यूनियन और रिक्शा यूनियन के बाद उमाशंकर बीड़ी मज़दूर यूनियन बनाने में लग गया है। मुख्तार सहकारी सिलाई दुकान के चक्कर में दफ्तरों के चक्कर लगा रहा है। मेरे आते ही रात की पुलिया पर महफिलें आबाद हो गयी हैं। अब ज्यादातर बातचीत राजनीति के बारे में होती हैं। अतहर को पार्टी या राजनीति में मज़ा नहीं आता। लेकिन ग्रुप के साथ वह भी खिंचा-खिंचा फिरता है। इस साल फिर उसने इंटर का प्राइवेट फार्म भरा है लेकिन पढ़ाई नहीं हो रही। मैंने उसे ऑफर दिया है कि वह मेरे साथ चौरे में रहे। मैं उसे पढ़ा दिया करूंगा। आइडिया अतहर को पंसद आया है लेकिन प्राब्लम ये है कि अब्बा दुकान पर अकेले रह जाएगे। छोटा भाई दुकान नहीं जाता। जबकि अब वह इतना छोटा नहीं रह गया है।

घर में एक बुरी ख़बर यह सुनने में आई कि सल्लो की शादी कानपुर में तय हो गयी है। उसका होने वाला पति रिक्शा चलाता है। यह सुनकर मैं सकते में आ गया। कानपुर में रिक्शा चलाता है। मैंने दिल्ली में जामा मस्जिद इलाके में रिक्शे चलाने वालों के हाथ देखे हैं जिनकी खाल ऐड़ी जैसी सख्त होती है। सीने घंस जाते हैं और जल्दी ही टी.वी.

का शिकार हो जाते हैं। सल्लो की शादी किसी रिक्शेवाले से होगी इसे मैं हज़म नहीं कर पाया लेकिन और क्या हो सकता है? क्या सल्लो के

लिए मैं उसकी बिरादरी का कोई लड़का खोज सकता हूं? लेकिन अभी इतनी जल्दी क्या है? सल्लो मुश्किल से बीस-बाईस साल की है। पर ये भी है कि इन लोगों में लड़कियों की शादी इस उम्र में नहीं होती तो फिर बड़ी मुश्किल होती है।

सल्लो रात में मेरे पास आई। लेकिन इस बार आना अजीब आना था। उसका चेहरा उतरा हुआ था। वह मेरे पास लेटते ही फूट-फूट कर रोने लगी। मैं डरा कि शायद उसके रोने की आवाज़ नीचे तक न पहुंच जाए। वह लगातार रोये जा रही थी। उसके बाद देर तक बच्चों की तरह सिसकती रही। मैं उसे सांत्वना देने के लिए उस पर हाथ फेरने लगा। उसने मेरा हाथ अलग कर दिया और मेरे सीने से चिमट कर लेट गयी। सिसकियों और आंसुओं से मेरा कुर्ता नम हो गया।

"हम अभी शादी नहीं करना चाहते हैं", वह बोली।

मैं क्या जवाब देता। धीरे-धीरे उसकी सिसकियां कम होने लगीं।

"कानपुर में नहीं रहना चाहते", वह फिर बुदबुदायी।

"आप कुछ करते क्यों नहीं।" वह बोली और मुझे लगा कि ऊपर से नीचे तक मुझे तेज़ धारदार चीज़ से काट दिया गया हो। वह बिल्कुल ठीक कह रही थी। पिछले दो-तीन साल से वह रात में अक्सर मेरे पास आती है। मैं उसके साथ वह सब कुछ करता हूं जो संभव है। वह पूरी तरह समर्पित है। मेरे इशारे पर नाचती है। पता नहीं मन ही मन मुझे क्या मानती है। मेरे ऊपर विश्वास करती है। आज उसे मेरी मदद की ज़रूरत हैं। मैं कुछ करता क्यों नहीं? मैं क्या कर सकता हूं? सल्लो घर में खाना वाली बुआ की भतीजी है। बुआ का भाई रिक्शा चलाता है। ये लोग जाति के फक़ीर हैं। मैं क्या कर सकता हूं? ये भी तो नहीं हो सकता कि सल्लो को लेकर भाग जाऊं। भाग जाने का मतलब खेती-बाड़ी छोड़ना, घर छोड़ना और एक अनपढ़ लड़की से शादी करना है। मैं ये नहीं कर सकता। तो फिर ये मौज मस्ती. . . सल्लो के साथ चांदनी रातों में रतजगा

का क्या मतलब है? वह बेचारी मुझसे यह आशा क्यों लगाये है कि मैं कुछ कर पाऊंगा।

"मैं तुम्हारे मियां को कोई नौकरी दिला दूंगा या उसे केसरियापुर बुला लूंगा। वहां वह बटाई में खेती कर सकता है, तुम वहां आराम से रह सकती हो", मैंने अटक-अटक कर कहा।

"उससे शादी नहीं करना चाहती", वह बोली।

कुछ देर हम दोनों ख़ामोश रहे।

"क्या तारीख तय कर दी है?" मैंने पूछा।

"हां रजब के महीने में है।"

वह फिर रोने लगी। मुझसे और ज्यादा करीब आ गयी। उसके आंसू मेरे चेहरे पर गिरने लगे। मेरा दिल अंदर से घुमड़ने लगा। सिसकियों से हिलता उसका शरीर मेरे अंदर कम्पन पैदा करने लगा। मैं धीरे-धीरे उसे सहलाने लगा।

"नहीं, आज कुछ मत करना", वह बोली।

"क्यों?"

"बस. . .वैसे ही।"

वह रातभर रोती रही और उसे दिलासा देता रहा। यह साफ जाहिर था कि दोनों से कुछ नहीं होगा।

"भइया आपसे कौनो मिले आय है", गुलशन ने खलिहान में आकर बताया। मैं खलिहान में नीम के पेड़ के नीचे चारपाई पर लेटा बैलों का 'लाख` के ऊपर चलना देख रहा था।

"कौन है?"

"हम का जानी. . .मोटर से आये हैं।"

"मोटर से।"

"हां सफेद मोटर है. . .एक जनानी भी साथ हैं।"

ये कौन हो सकता है जो केसरियापुर गाड़ी से आया है और उसके साथ एक 'जनानी` भी है। मैं तेज़-तेज़ कदमों से चौरे की तरफ बढ़ा। अपने अंगौछे को सिर पर कस लिया। चौरे के सामने धूल से अटी एम्बेसडर खड़ी थी। मैं अंदर आया तो दूर से देखा। एक चारपाई पर कोई लेटा है और दूसरे पर कोई औरत बैठी है। औरत ने शायद लेटे हुए आदमी को बताया कि मैं आ गया हूं। वह उठकर बैठ गया। मेरे ऊपर हैरत का पहाड़ टूट पड़ा। अहमद. . .अहमद तो लंदन में है।

अहमद आगे बढ़ा और मुझसे लिपट गया "देखा यार तुम्हें तलाश कर ही लिया।"

इनसे मिलो राजी रतना है, बंबई में इनकी 'हार्सशू कन्सल्टेंसी` है. . .पदमजी रत्ना का नाम सुना होगा तुमने. . .ये उनकी लाडली हैं।" अहमद ने इस तरह परिचय कराया कि उसके और राजी रत्ना के करीबी संबंध समझ में आ गये।

मैंने ध्यान से राजी रत्ना की तरफ देखा। पहली नजर में ही कोई बगैर किसी शक और शुब्हे के कह सकता है ग़जब की खूबसूरत बड़े-बड़ों का सिर फुका देने वाली सुंदरता। दमकता रंग, किताबी नाक नक्शा, बड़ी और ख़ूबसूरत आंखों में ग़जब का आत्मविश्वास। लंबा कद बहुत गठा हुआ और काव्यात्मक अनुपात में ढला शरीर. . .मैं उसे देखता ही रह गया।

"मैं लंदन एच.सी. के लिए एक प्रोजेक्ट कर रहा हूं. . दरअसल है ये एम.ई.ए. का प्रोजेक्ट है। लेकिन हमारी इसमें 'की पोज़ीशन` पार्टनर हैं।" अहमद ने बताया। मैं कुछ समझ नहीं पाया। एच.सी. क्या है? एम.ई.ए. क्या है? प्रोजेक्ट कैसा है? लेकिन कुछ पूछा नहीं। अहमद जो कपड़े पहने था वे चीख-चीख़कर कह रहे थे कि हम हिंदुस्तानी नहीं हैं, विदेशी हैं। अहमद का रंग कुछ और साफ हो गया था जिसमें हल्की -सी लाली शामिल हो गयी थी, घुंघरियाले बाल बढ़ रहे थे जिससे उसके चेहरे का 'प्रेमीभाव` और

निखर आया था। और मैं? गांव में रहते-रहते झुलस गया था। गाढ़े का कुर्ता, पैजामा पहने था जो अच्छा खासा मैला हो चुका था। गले में दस रुपये वाला अंगौछा था। बालों में ज़रूर भूसे के कुछ टुकड़े रहे होंगे। पैर और चप्पल धूल में अटे थे।

गुलशन तीन गिलासों में पानी ले आया। अहमद ने कहा "यार गाड़ी के डिक्की से सामान निकलवा लो। मैडम हम सबके लिए

लखनऊ दिल्ली से खाना पैक करा लाई हैं और पानी की बोतलें भी हैं। तीन सूटकेस भी हैं। गुलशन ने पानी के गिलासों की ट्रे तख़्त पर रख दी और अहमद के साथ गाड़ी से सामान निकालने चला गया।

"आप लोग दिल्ली से आ रहे हैं।"

"हां. . .मार्निंग "लाइट था. . .पहुंचा लखनऊ . . ." मैं समझ गया राजी रत्ना को हिंदी बोलने में असुविधा हो रही है।

"आपका विलेज सुंदर है।"

"हां, थैंक यू. .. गांव के पीछे जहां तालाब, सरकण्डे के जंगल और आम के बाग हैं वह इलाका बहुत खूबसूरत है।"

शाम को चौरे की विशाल छत पर तीन चारपाइयां और उनके बीच एक चौकी डाल दी गयी। छत पर से गांव का नज़ारा राजी और अहमद को बहुत अच्छा लगा। अहमद अपना कैमरा ले आया जिसका लेंस बंदूक की नलकी की तरह लंबा था। वह छत पर से गांव की तस्वीरें लेने लगा। उसके बाद उसने कैमरा राजी की तरफ मोड़ दिया और क्लिक क्लिक की आवाजें लगातार आने लगी। हर क्लिक की आवाज़ पर राज़ी नया पोज़ देने लगी। मैं उसकी सुंदरता और शारीरिक सुंदरता पर मुग्ध हो गया। मज़े की बात यह भी थी कि वह शर्म और हया जैसे शब्दों से अपरिचित लगी।

अंधेरा होते ही गुलशन ने चौकी पर मिट्टी के सिकोरों में रुई लगा कर बनाये गये चिराग जला दिया। अहमद ने जॉनी वाकर ब्लैक लेबिल निकाली। सोड़े की बोतलें और बर्फ का थर्मस खोला। गिलासों में विस्की बनाने लगा। राजी के लिए उसने एक

गिलास में 'जिन` डाली और उसमें टमाटर का जूस मिला दिया। अहमद इतनी तैयारी से आया था कि उसे यहां किसी चीज़ की ज़रूरत ही न पड़ी। वह अच्छी तरह जानता होगा कि यहां कुछ न मिलेगा।

"यार बड़ी तैयारी से आये हो", मैंने अहमद से कहा।

"दरअसल हम लोग खजुराहो जा रहे हैं", वह बोला।

"खजुराहो", मैं उछल पड़ा।

"चलो तुम भी चलो।"

"मैं. . .?"

"हां. . .हां . . . गाड़ी में कम से कम एक आदमी के लिए तो जगह है ही।"

"यार गेहूं की मड़ाई हो रही है।"

"देख लो यार।"

मैंने सोचा मेरे साथ हमेशा ही ऐसा क्यों होता है। जब कुछ यादगार घटने वाला होता है और उसमें मेरी शिरकत हो सकती है तो कोई न कोई काम निकल आता है।

"राजी हिन्दोस्तान में मंदिरों पर एक फोटो फीचर बनाने जा रही है। इसी के साथ एक 'काफी टेबुल बुक` छपेगी और हम लोग अपनी 'रेकमेण्डेशन्स` 'मिनिस्ट्री ऑफ टूरिज्म़` को देंगे कि मंदिर टूरिज्म़ को कैसे बढ़ावा दिया जा सकता है। टूरिज्म़ डेवलपमेण्ट कारपोरेशन के साथ-साथ इस प्रोजेक्ट में कई 'मिनिस्ट्रीज़` भी लगी हुई हैं। मैं इस प्रोग्राम का कोआर्डीनेटर हूं क्योंकि इसको मैंने ही 'कन्सीव` किया था और हमारे हाई कमिश्नर ने लंदन से ये नोट कैबनिट सेक्रेट्री को भेजा था। आजकल मिस्टर घोष कैबनिट सेक्रेट्री है. . .वही जिनकी कोठी पर एक बार तुम मिलने आये थे?"

"हां-हां मुझे याद आ गया. . .इन्दरानी के अंकिल।"

"यस. . .वही अंकिल जिन्हें गवर्नमेण्ट ऑफ इंडिया के अलावा पूरा हिन्दुस्तान पागल मानता है।"

नशे का मजा थोड़ी ही देर में चढ़कर बोलने लगा। राजी रत्ना ने अपना गिलास खाली कर दिया। अहमद ने उसे दूसरा ड्रिंक बना दिया। हम लोगों का तीसरा ड्रिंक चल रहा था।

"यू आर सिटिंग टू फार फ्राम अस", अहमद ने राजी से कहा। वह उठकर अहमद के पलंग पर उसके साथ बैठ गयी। फिर अहमद की पीठ के पीछे पलंग पर लेट गयी।

वाह यार वाह क्या साले की किस्मत है लेकिन ये कोई नई बात नहीं है। लड़कियां तो इस पर उस ज़माने से मरती आयी हैं जब ये बी.ए. फर्स्ट इयर में था।

हम लोग अलीगढ़ के ज़माने की बातें करने लगे। उन दिलचस्प लोगों के किस्से जो दुनिया से निराले थे। बरकत अली खां कुंवर साहब छपरकनौती एण्ड मीर साहब गढ़ी कोटला के किस्से। इन पात्रों के बारे में अहमद अंग्रेज़ी में राजी को बताता जाता था और बस हंसती थी। उसकी हंसी रात की नीरवता में रौशनी की तरह फूटती थी।

कुछ देर बाद अहमद फैज़ की ग़ज़ल 'तुम आये हो न शबे इंतिज़ार गुजरी है` गाने लगा। मैं साथ देने लगा। राजी ने अपना सिर अहमद की गोद में रख लिया।

"यार सीढ़ियों वाला दरवाज़ा तो बंद है न?"

"हां बंद हैं वैसे भी जब तक मैं आवाज़ न दूंगा। यहां कोई नहीं आयेगा।"

"परिन्दा पर नहीं मार सकता।" वह हंसा।

फिर हम 'मजाज़` की 'आवारा` गाने लगे। उसके बाद 'मौत` गायी गयी। नशा बढ़ने के साथ आवाज़े सुंदर होती चली गयीं। पता नहीं हम रात में कितनी देर तक गाते रहे और पीते रहे। पहली बार मुझे लगा कि यार जगह कुछ नहीं होती। लोग होते हैं जो जगह को 'जगह` बनाते हैं।

रात में कोई तीन बजे मेरी आंख खुली तो राजी और अहमद एक ही पलंग पर लेटे थे। सो नहीं रहे थे। जो आदमी राजी के साथ लेटा हो वह सो कैसे सकता है और जो आदमी इन दोनों को साथ लेटे देख रहा हो वह भी कैसे सो सकता है।

पौ फटने के बाद राजी दूसरे पलंग पर चली गयी और फिर हम तीनों उस वक्त तक सोते रहे जब तक कि तेज़ धूप ने हमारी आंखें मसली नहीं।

कामरेड मिश्रा ने मुझे किसी ने किसी तरह 'कन्विंस` कर ही लिया कि मैं पार्टी टिकट पर नगर पालिका का चुनाव लडूं। मीटिंग में तय हुआ था कि शहर से पार्टी चार उम्मीदवार खड़े करेगी और नगरपालिका को अपने विचार फैलाने का मंच बनायेगी। लोगों के बीच जाने का मौका मिलेगा और पार्टी की ताकत भी बढ़ेगी। मैं बड़े पसोपेश में था। एक तरह गेहूं की मड़ाई हो रही थी जहां मेरा रहना बहुत ज़रूरी था और दूसरी तरफ इलेक्शन की सरगर्मियां थीं।

मुझे पार्टी ने नाका पार हल्के से खड़ा किया था। यह घोसियो का गढ़ था और यहां से एक घोसी भी खड़ा हो गया था। मैं अपने कार्यकर्ताओं के साथ इलाके में मीटिंगें करता था। घर-घर जाता था। लोगों से बातचीत होती थी। लेकिन अंदर ही अंदर पता यह चल रहा था कि घोसियों की पंचायत ने यह फैसला कर लिया है कि वोट घोसी को दिया जाएगा। मेरे कार्यकर्ता लोगों को समझाते थे कि कहां एम.ए. पास आदमी और कहां जाहिल जपट आदमी? तुम लोग फ़र्क़ क्यों नहीं कर रहे हो? बातचीत में सब 'कन्विन्स` हो जाते थे लेकिन हक़ीक़त यही थी कि घोसियों के शत-प्रतिशत वोट बकरीदी घोसी को ही मिल रहे थे।

एक ख्य़ाल मुझे यह आता था कि हमारा समाज छोटी-छोटी बिरादरियों में बंटा हुआ है और वे लोकतांत्रिक यानी बिरादरी की बैठकों में जनमत के आधार पर निर्णय लेती हैं और चाहती हैं कि उनका प्रतिनिधित्व उनकी ही जाति या बिरादरी का आदमी करे। यह बिरादरी समूह या गठबंधन नया नहीं है, बहुत पुराना है। इसे तोड़ना अभी संभव नहीं है। तो क्या लोकतंत्र का कोई ऐसा नक्शा तैयार हो सकता है जिसमें इन बिरादरियों की लोकतांत्रिक पद्धति और आकांक्षों को इस तरह मजबूत किया जाए कि उससे अंतत: लोकतंत्र मज़बूत हो।

कामरेड मिश्रा से इस बारे में बात भी हुई थी। वे मुझसे सहमत नहीं थे। उनका कहना था कि बिरादरी व्यवस्था आदिम और अशिक्षित समाज की देन है। उसे "आधुनिक लोकतांत्रिक प्रक्रिया में परिवर्तन नहीं किया जा सकता। इसके अलावा बिरादरी को मान्यता देने का अर्थ जाति धर्म और सम्प्रदायगत जड़ता को स्वीकार करना होगा।

मुझे इस बहस में मज़ा आने लगा था। मैं उनसे कहता था, मान लीजिए शहर में दस बिरादरी है। दसों अपनी-अपनी बिरादरी से एक-एक आदमी चुन लें। ये चुने हुए दस लोग नगरपालिका के सदस्य बन जाए और शहर की भलाई के लिए काम करें। अगर कोई सदस्य भ्रष्ट होगा तो बिरादरी उसे निकाल बाहर करेगी और किसी दूसरे को चुन लेगी। कामरेड का कहना था कि इससे बिरादरियों के बीच अलगाव और वैमनस्य की भावना बढ़ेगी। मेरा तर्क था कि क्यों? व्यवहार में आज भी हमारा समाज बिरादरी जातियों में बंटा हुआ है उसमें वैमनस्य का कारण यह नहीं कि वह केवल बिरादरियों में बंटा हुआ है बल्कि यह है कि एक बिरादरी पर यह साबित किया जाता है कि दूसरी उसके अधिकारों का हनन कर रही है। यदि ऐसा न होता तो बिरादरी या जाति दूसरी बिरादरी या जाति के लिए मन में द्वेष न पालती। कामरेड कहते थे कि वर्ग समाज में यह द्वेष वर्ग विभाजन के कारण है और बिरादरी में भी वर्ग हैं। ऊंचे वर्ग का वर्चस्व है। अब सवाल यह उठता था कि क्या बिरादरी का लोकतांत्रिकरण बिरादरी के इस वर्ग विभेद को तोड़ेगा या नहीं? मैं कहता था कि लोकतंत्र का मॉडल हमने योरोप से लिया है जहां जाति बिरादरी का 'कान्सेप्ट` नहीं है। वहां तो वर्ग विभाजन साफ है और उस आधार पर राजनीति हो सकती है। पर हमारे देश में बिरादरी और जाति समूहों के गठन को लोकतांत्रिक प्रक्रिया से गुज़रना होगा ताकि न केवल लोकतंत्र नीचे तक पहुँचे बल्कि कालान्तर में बिरादरी व्यापक सरोकारों से जुड़ेगी।

जैसे आमतौर पर बहसों का अंत नहीं होता इसका भी अंत क्यों

होता। इसके साथ-साथ प्रचार का काम चलता रहा। लेकिन मैं साफ देख रहा था कि बिरादरी की दीवार को हम किसी तरह भेद नहीं पा रहे हैं।

शहर के दूसरे तीन क्षेत्रों से तीन अन्य लोग खड़े किए गये थे। स्टेशन रोड से कामरेड बली सिंह, सैयदवाड़ा से आबरु बरेलवी और एक ग्रामीण क्षेत्र से सूरज चौहान चुनाव

लड़ रहे थे और कुछ नहीं तो शहर मे लाल झंडों की भरमार हो गयी थी और लोग पार्टी पर ध्यान देने लगे थे।

गेहूं खलियान में तौला गया तो मेरे हाथों के तोते उड़ गये। कहां तो पन्द्रह मन के बीघे का हिसाब लगाया था और यह तो सात मन का बीघा भी नहीं था। खाद, बीज और पानी का पैसा निकाल दिया जाएे तो क्या बचेगा? उसके बाद मेरे छ: महीने से ज्यादा की जानतोड़ मेहनत? यही हाल आलू की फसल का हुआ। खाद वगैरा अधिक डालने से खेत में हरियाली तो बहुत दिखाई देती थी पर पैदावार अच्छी नहीं थी। आलू का दाम भी गिरा हुआ था। इतने नहीं थे कि कोल्ड स्टोरेज में रखवाये जाते। दूसरी तरफ सहकारी बैंक की किश्तें शुरू हो गयी थीं। वहां पैसा देना था लेकिन इन सब हालात से मैं निराश नहीं हुआ। सोचा खेती भी एक बहुत जटिल काम है। धीरे-धीरे अपने अनुभवों से आयेगी। आज नुकसान हुआ है तो कल फायदा होगा।

मौसम बदल गया। चारों तरफ धूल-धक्कड़ और झुलसा देने वाली गर्मी का साम्राज्य था। चौरा की ऊंची छतों और मोटी दीवारों के बीच में राहत नाम की चीज़ न थी। बिजली तो खैर नाम को ही आती थी। एक अमन की जगह थी तो बस नीम का पेड़ था जिसकी छाया में कुछ राहत मिलती थी। लेकिन धूल के बवण्डर वहां भी पीछा नहीं छोड़ते थे। नीम के नीचे बैठ या लेटकर कुछ पढ़ना भी मुश्किल था। एक अजीब तरह की खिन्नता और उदासी दिनभर रहती थी। शाम होते-होते कुछ बेहतर होता था। पर शाम का भी कोई मतलब इसलिए न था कि कुछ नया या उत्साह बढ़ाने वाला न होता था। वही दो-चार लोग आ जाते थे और गांव की बातें, फ़सलों के हालात, चोरी, डकैती की वारदातों पर तब्सिरे होते रहते थे। इन लोगों को आपस में तो मज़ा आता था लेकिन मुझे लगता था कि मेरे कान पक गये हैं और मैं गूंगा हो गया हूं क्योंकि मैं कुछ बोलता नहीं था। मैं बोलता तो क्या बोलता।

इसी दौरान मिश्राजी का संदेश मिला कि मैं तुरंत आ जाऊं। अब चुनाव में एक ही सप्ताह रह गया। चुनाव में भी मेरी दिलचस्पी ख़त्म हो चुकी थी। पर अब तो चुनाव लड़ना ही था। शहर पहुंचा तो जबरदस्त गर्मागर्मी का माहौल था। कामरेडों ने बस अड्डा लाल झण्डों और बैनरों से लाल कर दिया था। चौक पर एक लाल फाटक बनाया गया था। लाल चौक में क्रांतिकारी गाने गाये जाते थे। रोज़ दस-बीस पचास लोगों के

जुलूस निकलते थे। जी.टी. रोड पर आफिस बना हुआ था। पोस्टर के गट्ठरों का ढेर और मतदाता सूचियों का अम्बार लगा था। हर तरफ एक अजीब किस्म का उत्साह था। 'आबरु` साहब ने इलेक्शन पर कुछ नज्में लिखी थीं जिनका बड़ा चर्चा था। पर्चे बाज़ी भी चल रही थी। गर्माया हुआ माहौल देखकर मेरी हालत में कुछ सुधर हुआ। पंखे की हवा में दोपहर कटी। घर का खाना खाया। रात में पुलिया वाला प्रोग्राम हुआ, तब कहीं जाकर जान में जान आई। ये सोचकर और खुशी हुई कि यार इन लोगों को मैं ही पार्टी के नजदीक लाया था। मुख्तार ने तो पूरी ब्रिगेड तैयार कर ली है। शमीम साइकिल वाले के अलावा कोई छः सात सिलाई मज़दूर संघ के सदस्य काम कर रहे हैं। उमाशंकर भी अपने क्षेत्र के लोगों को ले आये थे। मिश्रा जी ने एक दिन मुझसे साफ कहा कि इतना उत्साह, जोश और हिम्मत पार्टी में पहले बिल्कुल नहीं थी। ये सब आपके कारण हुआ है। मैं क्या जवाब देता। खुश होकर ख़ामोश हो गया था।

चुनाव के दिन बीस रिक्शे और पांच इक्के किए गये थे ताकि वोटरों को पोलिंग स्टेशन तक ले जा सकें। इसके अलावा साइकिलें तो थीं हीं। मिश्रा जी ने सफेद झलझलाती धोती कुर्ता पहना था। कुर्ते पर हंसिया हथौड़ा का बैच लगा रखा था। वे हर क्षेत्र के सभी पोलिंग स्टेशनों का दौरा कर रहे थे। एस.डी.एम. की जीप भी शहर में दौड़ रही थी। मेरे

पोलिंग स्टेशन पर अतहर बैठा था। नाम ले लेकर बताया जा रहा था कि 'यार वह नहीं आया, उसे लाओ।` और कार्यकर्ता भाग रहे थे। सबके चेहरे लाल और कपड़े बुरी तरह पसीने में भीग गए थे। पूरे दिन वोट पकड़ते रहे और रात में पुलिया वाली महफिल जमी। यहां दोस्तों ने दो दौर चलने के बाद यह घोषित कर दिया कि मैं चुनाव जीत गया हूं। 'मार्जिन` कम है लेकिन चुनाव जीत गया। इस घोषणा पर कुछ दौर और चले। अतहर और उमाशंकर में हस्बे दस्तूर नोक झोंक होती रही। रात में बारह बजे घर लौटा तो देखा सल्लो बावरचीखाने में बैठी ऊंघ रही है। पता चला कि मुझे खाना खिलाने के लिए वह अभी तक जाग रही हैं उसे देखकर नशा उतर गया। अगले महीने उसकी शादी है।

बरामदे में बैठकर मैंने खाना खाया। आंगन में सब सो रहे थे। खाने के बाद मैंने सल्लो से कहा कि तुम ऊपर आ जाना तो उसने मना कर दिया। नशे में मुझे यह बहुत बुरा लगा और मैं गुस्से में कोठे पर चला गया।

अगले दिन 'रिज़ल्ट` आया। मैं पचास वोटों से हार गया था। पार्टी के 'कैन्डीडेटों` में सिर्फ कामरेड बली सिंह जीते थे। पहले तो मेरे और ग्रुप के सारे लोग निराशा में डूबे रहे लेकिन मिश्रा जी के आने और ये कहने कि ज़िले के इतिहास में पहली बार सी.पी.एम. का कोई उम्मीदवार जीता है, हम उत्साह में आ गये। जुलूस निकालने की तैयारियां शुरू हो गयी। घोड़ा लाया गया। बलीसिंह को घोड़े पर बैठाया गया। नगाड़े वाले बुलाये गये। एक-दो गैस बत्ती मिल गयी और जीत का जुलूस निकाला गया।

मैं जानता था कि बिरादरी की दीवार में मैं छेद नहीं कर पाऊंगा पर पता नहीं थोड़ी सी उम्मीद थी। वह भी गयी। उधर फसल चौपट हो गयी। अब क्या करूं? केसरियापुर चला जाऊं? सल्लो की शादी होने वाली है। वह अब मेरे पास नहीं आती। मैं क्या करूं? मुख़्तार शाम को बुलाने भी आया, मैंने इंकार कर दिया। कहा तबीयत ठीक नहीं है। शाम अंधेरे में ऊपर कमरे मे ही पड़ा रहा। पता नहीं क्या-क्या सोचता रहा। नीचे से जब अम्मां की आवाज़ आई कि खाना तैयार है तो मैं नीचे गया।

आज पता नहीं कितने दिनों बाद सबके साथ खाना खाया। अब्बा ने इलेक्शन की बात छेड़ी और कहा कि मियां यहां डेमोक्रेसी का यही हाल है। तुम ख़ुद देखना चाहते थे, तुमने देख लिया। यहां तो कुछ हो ही नहीं सकता। वे बहुत देर तक इसी तरह की बातें करते रहे और मैं सुनता रहा। वे दरअसल मेरे इलेक्शन लड़ने से ही सहमत न थे। पर क्या करते। हमारे यहां एक मुहावरा है कि जब बाप का जूता बेटे के पैर में आने लगे तो बेटे को बेटा नहीं, दोस्त समझना चाहिए।

ऊपर आसमान में तारे थे। मैं तारों के बारे में कुछ नहीं जानता। इसलिए बस उन्हें देख रहा था। नींद कर दूर-दूर तक नामो-निशान नहीं था। तहसील के घण्टे ने ग्यारह बजाये। मैंने सोचा देखो आज कितने घंटे सुनने को मिलते हैं। आसमान साफ था और हवा थोड़ी-थोड़ी चलना शुरू हो गयी थी। अचानक मैंने देखा कि सल्लो आ गयी। मैं खुशी से उठकर बैठ गया।

जब हम साथ-साथ लेट गये तो वह बोली- "आप आज कहीं नहीं गये।" मैं खामोश रहा। लगा यह कह रही है कि आप इलेक्शन हार गये। आपकी फसल बर्बाद हो गयी, आलू की पैदावार अच्छी नहीं रही। आप दु:खी हैं और इस वजह से मैं आपके पास आई हूं. . .हालांकि इसी महीने मेरी शादी है. . .।

मैं खामोश रहा। वह मेरे सीने पर हाथ फेरने लगी। जो बातें आप शब्दों से नहीं कर पाते उसे स्पर्श से कह देते हैं। मुझे लगा यह स्पर्श पूरी एक किताब है। वह जाने क्या-क्या मुझसे कह रही है। बता रही है कि मेरे और उसके संबंध हैं लेकिन मैं मजबूर हूं, वह भी मजबूर है। पर मजबूरी से आगे भी कुछ होता है। वह यह कि मजबूरी को स्वीकार न किया जाए और उसे मान्यता न दी जाए। मैं उसके कंधें को सहलाने लगा। वह धीरे-धीरे सिसकने लगी। मैंने अपनी तरफ उसका चेहरा किया और उसे प्यार करने लगा। उसका रुदन बढ़ गया। सिसकियां तेज़ हो गयीं. . . हम सब कुछ सह लेते हैं, पर उसकी क़ीमत चुकाते हैं. . .हम ये क़ीमत ही तो चुका रहे हैं. . .मैं धीरे-धीरे उसके स्पर्श के माध्यम से उस ताप को महसूस करने लगा जो स्त्री और पुरुष के बीच की दीवारों को तोड़ देता है। वह सिर्फ सिसक रही थी। आसमान में केवल कुछ टिमटिमाते तारे थे और गर्मियों के दिनों की रातों के तीसरे पहर बहने वाली खुश गवार हवा थी। पता नहीं ये हवा कहां छिपी बैठी रहती है और तीसरे पहर के बाद आती है। हम दोनों खामोश नहीं थे। वह सिसकियां भर रही थी और मुझे पता नहीं था कि मेरे चेहरे पर जो आंसू हैं वे मेरे हैं या उसके हैं। हो सकता है ये कभी न पता चल सके।

बहती हवा के साथ, टिमटिमाते हुए तारों के साथ हमारा सफर आगे बढ़ता रहा। बिल्कुल ऐसा हो रहा था जैसे कोई माहिर उस्ताद आलाप शुरू कर रहा हो। गले के अंदर, बंद-बंद पर गहरी और दिल में उतर जाने वाली आवाज़ जिसके ओर-छोर का पता नहीं है। संवेदना की तरंगें हवा के साथ उसके चारों ओर फैल रही थीं और वह एक अर्थ में उसे पहचानती और दूसरे अर्थों में उसे अस्वीकार करने वाली स्थिति में थी जहां आदमी का अपने ऊपर वश नहीं चलता, वह सोचता कुछ और है, होता कुछ और है। हवा ने बंधन काटने शुरू कर दिये। टिमटिमाते तारों ने उन्हें जोड़ने की कोशिश की लेकिन एक हवा का तेज़ झोंका आया और अपने साथ हम दोनों को बहा कर ले गया। दूर बहुत दूर। होने और न होने की स्थिति से परे।

https://www.hindiadda.com/garajat-barasat-part-i/

वे बुझे-बुझे बेमतलब दिन थे। चुनाव में अपनी पूरी ताकत झोंक देने के बाद सब पता नहीं आराम कर रहे थे या अपनी अपनी हार से समझौता करने की कोशिश कर रहे थे। मैं दिन-दिनभर घर पर पड़ा रहता और 'जासूसी दुनिया` में डूबा रहता। आश्चर्य करता कि यार क्या लेखक है जो पूरा जगत रच देता है। जब चाहता है सिर्फ कुछ शब्दों के माध्यम से जहां चाहता है वहां पहुंचा देता है और इच्छानुसार बाहर निकाल कर पटक देता है। उसने एक प्रति संसार बनाया है जहां पाठक जीते और मरते हैं, खुश और दु:खी होते हैं। पात्रों से प्रेम और घृणा करते हैं।

एक दिन दोपहर को तार आया। दिल्ली से सरयू डोभाल ने तार भेजा था 'द नेशन डेली` के चीफ रिर्पोटर नज्मुल हसल से मिलो। वे तुम्हें नौकरी दे सकते हैं।` तार पढ़कर मैं सकते में आ गया। 'नेशन डेली` अंग्रेजी का प्रमुख अखबार है। मैं हिंदी में एम.ए. हूं। नौकरी? अख़बार और वह भी अंग्रेज़ी के अख़बार में? मैं तार हाथ में लिए घंटों सोचता रहा। अब्बा ने तार पढ़ा। चश्मा उतारा। मेरी तरफ देखा और बोले- बोलो? क्या सोचते हो? मैं क्या बोलता? खामोश रहा। केसरियापुर, चौरा, खेती, रहमत और गुलशन। यहां पार्टी, दोस्त, आंदोलन. . .रिक्शा यूनियन, सिलाई कर्मचारी यूनियन, बीड़ी मज़दूर यूनियन. . . मुख्तार, उमाशंकर और मिश्रा जी. . .मैं क्या बोलता।

अब्बा समझ गये और बोले- "जल्दी क्या है सोच लो।"

एम.ए. किए हुए चार साल हो गये। अहमद लंदन हाई कमीशन में इंफारमेशन ऑफीसर है, शकील युवा कांग्रेस का अध्यक्ष बन गया है। किसी भी चुनाव में टिकट मिल सकता है। फैज़ी की शादी हो गयी है।

जावेद कमाल को नौकरी करनी पड़ रही है। कामरेड लाल सिंह शादी के चक्कर में है। सब कुछ गड्डमड्ड है। पता नहीं यहां क्या होगा? भविष्य अनिश्चित है। 'नेशन डेली` एक राष्ट्रीय अखबार है। उसके चपरासी की भी हैसियत होती है। मैं कम से कम चपरासी तो नहीं बनाया जाऊंगा। लेकिन समझ में आ नहीं रहा था कि क्या किया जाए। अगर चला भी गया तो क्या मैं अंग्रेजी में काम कर पाऊंगा या वहां से भी उसी तरह खाट खड़ी होगी जैसे यहां से हो रही है। तब मैं क्या करूंगा? लेकिन अगर कोई जानते बूझते हुए हिंदी के एम.ए. को अंग्रेजी के अखबार में ले रहा है तो जिम्मेदारी

उसकी भी बनती है और अगर मैं चाहूं तो क्या अंग्रेजी सीख नहीं सकता? जो लोग जानते हैं वे आसमान से उतरे लोग तो नहीं हैं।

"हम जानते थे कामरेड कि आप यहां टिकोगे नहीं।" कामरेड मिश्रा बोले और मैं कटकर रह गया- "देश का दुर्भाग्य यही है कि पढ़े लिखे लोगों के लिए छोटे शहरों में रोजगार नहीं है।"

"मैं तय नहीं कर पा रहा हूं कि जाऊं या न जाऊं?"

"ज़रूर जाओ. . .अगर मैं तुम्हारी 'पोजीशन` में होता तो जरूर जाता", वे ठण्डी सांस लेकर बोले।

मेरे जाने के फैसले से अब्बा और अम्मां ही नहीं पूरा घर खुश था। खाला तैयारी में जुट गयी थी। सल्लो के चेहरे पर भी मैं खुशी की छाया देखी। दो दिन में तैयारी पूरी हो गयी। मुख्तार और उमाशंकर को जब ये पता चला कि मैं 'नेशल डेली` में नौकरी करने जा रहा हूं तो उनके ऊपर बिजली-सी गिरी। दो तरह की बिजलियां थीं पहली यह कि मैं यहां सब कुछ छोड़ रहा हूं और दूसरी यह कि मैं 'नेशन डेली` जैसे अखबार में जा रहा हूं।

ट्रेन के वक्त के कोई एक घण्टा पहले मैं स्टेशन पहुंच गया था। सामान कुछ ज्यादा था। खाला ने कई तरह के हलुए, नमक पारे, मीठी टिकियाँ, लड्डू और न जाने क्या-क्या साथ कर दिया था। रात में खाने के लिए कबाब और पराठे थे। अब्बा ने दिल्ली में एक दो लोगों के नाम ख़त दिये थे। अब्बा स्टेशन आने पर तैयार थे लेकिन मैंने उन्हें बता दिया था कि मुझे सवार कराने बहुत लोग होंगे और वो क्यों तकलीफ करते हैं और फिर ट्रेन अक्सर लेट हो जाती है। रात का ग्यारह बारह बज सकता है।

स्टेशन पर उमाशंकर, मुख्तार, कलूट, अतहर के अलावा शमीम, किरमान और दूसरे लड़के भी थे। उमाशंकर और मुख्तार पिये हुए थे। खासतौर पर मुख्तार बहुत चढ़ाये हुए लग रहा था। उसे देखकर मेरा मन भर आया। तीन साल पहले जब वह मुझसे पहली बार मिला था तो पक्का मुस्लिम लीगी ज़ेहनियत का आदमी था। आज वह वामपंथी राजनीति में हैं सीध है। सीधी बात सोचता है। उमाशंकर कांग्रेसी हुआ करता

था। इन दोनों ने मेरे कहने, समझने और 'कन्विन्स` करने से एक सपना बुना था। पता नहीं मैं उस सपने के केन्द्र में था या नहीं लेकिन इतना तय है कि उस सपने में मेरी एक महत्वपूर्ण स्थिति थी। मैं इन लोगों से आंखें नहीं मिला पा रहा था। सामान को टी-स्टाल पर रखवाकर हम स्टेशन के उस हिस्से में चले गये जहां अंधेरा था। मैं उम्मीद कर रहा था कि अब ये लोग मुझ पर सवालों की बौछार कर देंगे। लेकिन वे खामोश थे। इधर-उधर की बातें हो रही थीं। दिल्ली की बातें 'नेशन डेली` की बातें, हम जानबूझ कर इस बात से बच रहे थे कि मैं वापस दिल्ली जा रहा हूं। उस शहर जा रहा हूं जिसने मेरे चूतड़ों पर लात मारकर मुझे बाहर कर दिया था. . . पूरे माहौल में एक तनाव था, लगता अगर ये बाहर आ गया तो संभालना मुश्किल हो जाएगा।

ट्रेन जब दूर से आती दिखाई देने लगी तो मुख्तार मुझसे लिपट कर रोने लगा। उमाशंकर ने उसे डांटा- 'अबे ये क्या. . . कोई सात समन्दर पार तो जा नहीं रहे हैं। रातभर का सफर है. . .दिल्ली यहां से कितनी दूर है।` मैं सोचने लगा शायद यहां से दिल्ली सात समन्दर पार ही है और मुख्तार का रोना वाजिब है।

सुबह दिल्ली स्टेशन पर उतरा तो ध्यान आया कि जब यहां से जा रहा था और बाबा मुझे छोड़ने आया था तो प्लेटफार्म पर हमने शराब के

नशे में बहुत थूका था- दरअसल यह थूकना था दिल्ली पर। तो मैं दिल्ली पर थूककर गया था और अब फिर दिल्ली आ गया। कोई आवाज़ आई- अपने थूके को चाटने आये हो तुम. . .तुम्हारी इतनी हिम्मत हो गयी थी कि राजधानी पर थूक कर गये थे। देखा अब तुम इसे चाट रहे हो।

सरयू डोभाल के चेहरे पर मुस्कुराहट फैल गयी। उसकी उदास और गहरी आंखों में पुराने संबंधों की झलकियां दिखाई पड़ी।

"कब आये?"

"बस सीध स्टेशन से चला आ रहा हूं।"

बाथरूम से निकलकर अमित जोशी आ गया। उसका स्वभाव बिल्कुल अलग और बेलौस किस्म का है।

दोनों लंबे समय से साथ-साथ रहते हैं। छोटी-छोटी बातों पर उनके बीच चलती रहती है। बड़ी बातों पर कभी विवाद नहीं होता क्योंकि जीवन, जगत, राजनीति के बारे में उनकी राय एक है। किचन में पानी गिरा देने, बाल्टी में कपड़े भिगोकर छोड़ देने, चप्पल में कील लगवाने, छिपाकर रखी गयी आधी सिगरेट पी जाने पर दोनों में बहस हो जाती है जो साहित्य, कला और संस्कृति का चक्कर लगाती मनोविज्ञान और राजनीति तक खिंचती चली जाती है। फिर दोनों थक जाते हैं और बाहर निकल पड़ते हैं। दोनों कविताएं लिखते हैं, दोनों नक्सलवाद के प्रति समर्पित हैं। अमिता तो कुछ ज्यादा ही लाल है। वह शायद पार्टी सदस्य है और कई बार गंभीरता से 'आर्म स्ट्रल` में शामिल होने के बारे में सोच चुका है।

"कहो खेती बाड़ी कैसी चल रही है?" अमित ने पूछा।

"बस यार हो गया खेल खतम।"

"अरे क्यों क्या हुआ?" सरयू बोला।

"बस क्या बताऊँ लंबी दास्तान है. . ."

वे दोनों चले गये। मैं सो गया। तय यह हुआ था कि शाम को

काफी हाउस आ जाएगे और वही से वापस घर आयेंगे।

काफी हाउस पूरा ब्रह्माण्ड है। उसमें अनगिनत ग्लैक्सियां हैं। इनके अपने-अपने सूरज और चांद हैं अपनी-अपनी पृथ्वी है। जिस तरह कोई -पूरे ब्रह्माण्ड को नहीं जानता उसी तरह कोई यह नहीं कह सकता कि मैं काफी हाउस को जानता हूं। सुबह फूल वाले उसके बाद ऑफिस वाले, फिर रेसवाले, सट्टेवाले, दुकानदार, प्रेमीजोड़े, बेरोजगार युवक, काफी हाउस से ही ऑफिस चलाने वाले व्यापारी, चित्रकार, नशेड़ी, अपराधी, होमो सेक्सुअल, पत्रकार और शाम होते-होते मिली-जुली ग्लैक्सियां नज़र आती है। हिंदी के लेखक-कवि, उर्दू के साहित्यकार, चित्रकार, दफ्तरों से निकले बाबू,

पत्रकार, अध्यापक, प्रकाशक, सपरिवार कुछ लोग सिनेमा जाने से पहले काफी पीने के इच्छुक हैं। सबकी न केवल अपनी-अपनी मेजें 'सुरक्षित' होती है बल्कि जगह भी लगभग तय हो गयी है। काफी हाउस के अंदर आते ही लगता है कि जैसे घर आ गये हों।

हिंदी वालों की अपनी अलग जगह है। ज्यादा लोग आ जाते हैं तो कुर्सियों की संख्या बढ़ जाती है और ज्यादा आ जाते हैं तो मेज़ें जोड़ दी जाती हैं और ज्यादा आते हैं तो रेलिंग पर काफी के कप रख लेते हैं। पर यहां आने वाला बिना अपना उद्‌देश्य पूरे हुए जाता नहीं। हिंदी वालों के भी कई समूह हैं। ये समूह नए पुराने के आधार पर या वैचारिक आधार पर या क्षेत्र के आधार पर नहीं बने हैं। साहित्यिक आंदोलनों और पत्रिकाओं के आधार पर भी नहीं है। बस कुछ ऐसा है कि जिसे जहां बैठना रुचता है, वहीं बैठता है। गांधीवादी और नक्सलवादी साथ बैठ सकते हैं। सत्तर साल का आदमी और बाइस साल का लड़का एक मेज़ पर काफी पी सकते हैं। नौकरी पाया खाया-पिया साहित्यकार और भुखमरी से जूझता कवि साथ हो सकते हैं। कुछ लोग बहुत बोलते हैं। कुछ बिल्कुल खामोश रहते हैं। कुछ लड़ते हैं तो कुछ आवाज़ तक नहीं निकालते। बहस होती है तो ये पता नहीं चलता कि कौन क्या कह रहा है। बोलने और सुनने पर पाबंदी नहीं है।

हमारी अपनी अलग ग्लैक्सी है। ज्यादातर साहित्यकार हैं या साहित्य में रुचि लेने वाले हैं। रुचि लेते लेते वे भी लेखक-कवि बन जाते हैं। किसी के कुछ बनने या बिगड़ने पर कोई कुछ नहीं कहता, हां इतना ज़रूर है कि यहां किसी का अपमान करना वर्जित है। हमारी टोली में ज्यादातर जवान लोग हैं। सबको एक दूसरे के बारे में पता है । जो काफी के पैसे नहीं दे सकता है उससे कोई नहीं कहता कि तुम अपने पैसे दो। उसके पैसे इधर-उधर से हो जाते हैं।

शाम को काफी हाउस आने वाले में एक विशिष्ट व्यक्ति हैं जागेश्वर जी। इनके बारे में सबको सब कुछ मालूम है। जागेश्वर जी दुबले-पतले हैं। सिर कुछ ज्यादा बड़ा है या शायद सफेद दाढ़ी और बड़े बालों के कारण ऐसा लगता है। हमेशा सफेद कुर्ता और पैजामा पहनते हैं। जेब में कलम और हाथों में काग़ज़ों का बंडल होता है। हमेशा नशे में दिखाई देते हैं। कुर्ते की जेबों में शराब के दो अद्‌धे होते हैं, जिनमें वे खुलेआम पीते

हैं। उनके ऊपर काफी हाउस में कोई रोक-टोक नहीं है। नशा जब ज्यादा हो जाता है तो किसी जगह खड़े होकर भाषण जैसा देने लगते हैं जिसे कोई नहीं सुनता। रात में दस बजे तक काफी हाउस में इधर-उधर चक्कर लगाते हैं और फिर चले जाते हैं।

जागेश्वर जी कभी कम्युनिस्ट पार्टी के 'होल टाइमर` हुआ करते थे और बंबई के बान्दरा इलाके वाली कम्यून में रहते थे। बरसों वहां ट्रेड यूनियन में काम किया। पैसों की कमी की वजह से कहते हैं एक बार अपने लड़के का इलाज नहीं करा पाये थे जिसकी वजह से उसकी मौत हो गयी थी लेकिन पार्टी से उनका लगाव और काम के प्रति उनका समर्पण कम नहीं हुआ। वे लगातार अपने आपको ट्रेड यूनियन में झोंके रहे। पार्टी पर प्रतिबंध लगने के बाद वे अंडर ग्राउण्ड हो गये और कानपुर में काम करते रहे। फिर जब पार्टी की लाइन बदली और पार्टी संसदीय लोकतंत्र में शामिल होने को तैयार हो गयी तो कामरेड जागेश्वर पार्टी से अलग हो गये। इसी दौरान शराब पीने लगे। धीरे-धीरे इतनी पीने लगे कि चौबीस घंटे नशे में रहने लगे। अब जागेश्वर जी कुछ अख़बारों में अनुवाद का काम करते हैं और शराब पीते हैं। काफी हाउस में उनका बड़ा सम्मान है। हर आने वाला उन्हें जानता है। कोई उनसे कुछ नहीं कहता। जिस मेज़ पर जिन लोगों के साथ उन्हें जाकर बैठना होता है बैठ जाते हैं। आमतौर पर कुछ नहीं बोलते। अपनी लाल लाल आंखों से सबको घूरते रहते हैं। वे अक्सर हम लोगों के साथ बैठते हैं। उनसे काफी के लिए पूछा जाता है और वे मना कर देते हैं।

एक और ख़ास आदमी आता है। काफी छोटे कद का यह आदमी खाकी नेकर और कमीज़ पहनता है। चेहरे पर अजीब तरह की दाढ़ी रखता है। इसके पैरों में स्पोर्ट शू होते हैं। यह आता है पूरे काफी हाउस में लोगों से हाथ मिलाता है। बताया जाता है कि यह कभी हॉकी का खिलाड़ी था। बहुत उत्साह में, शायद नशे की वजह से, यह आदमी सब से हाथ मिलाकर चला जाता है। वैसे तो हम लोगों की मेज़ पर आने वालों की सूची में पचास-साठ नाम आ जाएगे लेकिन बराबर आने वालों और एक दूसरे को जानने समझने वालों की सूची भी दस-पन्द्रह से कम न होगी। इन दस पन्द्रह में इतनी भिन्नता है कि दोस्ती का आधार खोज पाना भी कभी-कभी संकट का काम हो जाता है। नवीन जोशी किसी 'ऐड ऐजेन्सी` में काम करता है। बिल्कुल वैसा ही लगता है जैसा अल्मोड़ा के पंडित होते हैं। मण्डली में वह उन चंद लोगों में है जिनकी कुछ

बेहतर नौकरी है। इसलिए नवीन पर ऐसी ज़िम्मेदारियाँ आ जाती हैं जिन्हें निभाना ज़रूरी हो जाता है। जैसे किसी के पास काफी हाउस से वापस जाने के लिए बस का किराया नहीं है, किसी के पास फूटी कौड़ी नहीं बची है वगैरा वगैरा। नवीन के पास जब देने के पैसे नहीं होते तो उसके चेहरे पर ऐसे भाव आ जाते हैं जैसे उससे पैसे मांगे नहीं जा रहे हैं बल्कि वह ख़ुद मांग रहा है। नवीन ने हाल ही में कविताएं लिखना शुरू किया है। इसके अलावा फिल्मों और कला प्रदर्शनियों की समीक्षा भी कर देता है। उसे विज्ञान में दिलचस्पी है. . .और सबसे ज्यादा पसंद है गप्पबाज़ी, यारबाज़ी ओर काफी की मेज़ पर बौद्धिक बहसें करना।

इस मण्डली में हनीफ नाम का एक लड़का है जो कभी-कभी पागल हो जाता है। पागलपन के दौरों के दौरान वह पूरी मण्डली को इस कदर परेशान कर देता है कि लोग उससे पनाह मांगने लगते हैं। वैसे वह अच्छा चित्रकार और कवि है। पता नहीं उसके ये दौरे कैसे होते हैं? क्यों आते हैं? इलाज? अनिल वर्मा पत्रिका निकालता है और फ्रीलांसिंग करता है। इससे पहले इलाहाबाद में पढ़ाता था लेकिन कुछ प्रभावशाली लोग उसके खिलाफ हो गये थे और उसे निकाल दिया गया। पंकज मिश्रा अधेड़ उम्र लेखक हैं। अब कविताएं लिखना बंद कर चुके हैं और समीक्षा करते हैं। अभी हाल में एक दिन नवीन बलीसिंह रावत को ले आया। वह बंबई में प्रूफ़ रीडर था अब यहां 'राष्ट्र` में सह-सम्पादक हो गया है। दूसरे लोगों में रामपूरन, कांति, जगदीश्वर जैसे नए लड़के हैं जो कैरियर बनाने दिल्ली आये हैं।

पुराने दोस्तों में बाबा है। वह अब काफी हाउस नहीं आता। कहता है यह समय मैं अपने बच्चों को देता हूं। उन्हें मैं खुद पढ़ाता हूं। मैं यह नहीं चाहता कि वे भी मेरी तरह जीवन को एक शोकगीत के रूप में गाते रहें।

मैं जब काफी हाउस पहुंचा तो अमरेश जी भी बैठे थे। किसी जमाने में कविताएं लिखा करते थे और लोहियाजी के युवातम् मित्रों में थे। आजकल विख्यात समाजवादी मज़दूर नेता विक्टर डिसूजा के साथ 'हमारा समाज` निकाल रहे हैं। आजकल इन्हीं के साथ सरयू डोभाल काम कर रहा है। इनके अलावा जे.एन.यू. के कुछ छात्र भी थे। बातचीत 'गोली दागो पोस्टर` पर हो रही थी। चूंकि कविता मैंने नहीं पढ़ी थी इसलिए सिर्फ खामोशी से सुन रहा था। कभी-कभी काफी हाउस आने लेकिन अपना पूरा हक

जताने वाले निगम साहब भी अपने तरह के आदमी है: खाते-पीते आदमी है: कविताएं लिखते है: अपने आपको लखनऊ स्कूल का शायर भी मानते हैं और ये कहते है कि 'असर` लखनवी के शागिर्द आगा 'गौहर` से लखनऊ में 'इस्लाह` लिया करते थे। निगम साहब पहले अपना तखतलुख छोड़ दिया है।

निगम साहब की गाड़ी काफी हाउस के सामने खड़ी रहती है और जरूरत के मुताबिक जब जिसको चाहते हैं गाड़ी में आने की दावत देते हैं। वहाँ थर्मस में बर्फ, पानी और विस्की की बोतल बराबर मौजूद रहती हैं।

धीरे-धीरे दूसरे लोग आते रहे और कुछ उठ-उठकर जाते रहे। बहस पता नहीं कैसे चारु मजूमदार से होती लिन पियाऊ पर आ गयी और फिर इधर-उधर भटकती हुई एम.एफ. हुसैन की नई प्रदर्शनी पर होने लगी।

वही परिचित दृश्य, परिचित लोग- क्या यही मेरी दुनिया है? और वह जो छोड़ आया हूं? वह शहर? वहां की धूल उड़ाती गलियां, खुली हुई गंदी नालियां, हाड़-मांस का ढांचा शरीर, बंधुआ मज़दूर, खेती में जान खपाते रामसेवक और गोपाल? क्या वह मेरा यथार्थ है? मेरा ही क्यों देश का यथार्थ है। फिर हम यहां क्यों खुश हैं? क्या 'सात समन्दर पार` एक ही देश के अंदर ये नख्लिस्तान बनाये गये हैं इसलिए बनाये गये हैं कि हर वह आदमी जो 'कुछ` कर सकता है अपने दिल की भड़ास निकालता रहे। ख़ैर छोड़ो अभी कल हसन साहब से मिलना है। पता नहीं कैसी नौकरी है जो वे देना चाहते हैं।

"अच्छा तो तुम्हें ये डर है कि तुम हिंदी मे एम.ए. हो अंग्रेजी कैसे लिखोगे. . .जानते हो अख़बार की जुबान में कितने लफ्ज होते हैं? मुश्किल से हज़ार और कितने तरह के जुमले बनते हैं? मुश्किल चार किस्म के. . .भई ये कोई 'लिटरेचर` तो है नहीं. . .तुम ये फ़ाइल ले लो और इधर बैठ जाओ. . .वहां डिक्शनरियां रखी हैं. . .आज कम से कम दो सौ नए लफ़्ज़ सीख लो. . .और जुमले. . .छपी हुई रिपोर्ट्स को पढ़ो. . .सब कुछ वैसे का वैसा ही जाता है। बस तारीख़ नाम, जगहें बदल जाती हैं. . .समझे. . ." हसन साहब ने मेरी ट्रेनिंग शुरू कर दी थी और मैं तेज़ी से सीखने लगा। एक ही हफ़्ते में उन्हें रिपोर्टें लिख कर दिखाने लगा। मुझे मैथ्यू साहब के साथ लगा दिया गया। मैथ्यू एम.सी.डी.

'कवर` करते हैं। ग्यारह बजे के बाद वे आते थे। मैं उनके साथ लग लेता था। वे सीधे प्रेस क्लब आ जाते थे। वहां उनका लंच होता था जिसके साथ दो बियर पीते थे। उसके बाद मैथ्यू फोन घुमाना शुरू करते थे। दस-बीस लोगों से कारपोरेशन की खबरें ले लेते थे। फिर हम चाय पीकर चार बजते-बजते दफ्तर आ जाते थे। मैथ्यू नोट्स मुझे दे देते थे। मैं न्यूज़ बनाता था। वे सिगरेट पर सिगरेट फूंकते और देश भर के अख़बार चाटते रहते थे। मेरी न्यूज़ में कुछ फेर करने के लिए वे टाइप राइटर पर बैठ जाते थे और बिजली की तेजी से उनकी उंगलियां चलती थीं। आठ बजे से पहले पहले न्यूज़ चीफ रिपोर्टर हसन साहब की मेज़ पर पहुंच जाती थी। हसन साहब नौ बजे के बाद आते थे। यानी मैं काफी हाउस का एक चक्कर लगा आता था और ग्यारह बजते-बजते रिपोर्टिंग से लोग जाने लगते थे। सबसे बाद में जाने वालों में हसन साहब हुआ करते थे क्योंकि वे डमी देखकर ही जाते थे।

दुबले, पतले, औसत कद, तीखा नाक नक्शा, तांबे की तरह चमकता रंग, घने सूखे और काले बाल। हसन साहब में अब भी उस आग की चिंगारियां हैं जो एक ज़माना हुआ उनके अंदर लगी थी। कभी-कभी मुझे अपने साथ घर ले जाते थे और स्काच विस्की की बोतल खोलकर बैठ जाते थे। हालांकि ऐसा बहुत कम होता था क्योंकि वे अपने काम में दीवानगी की हद तक डूबे हुए थे और रात दिन न्यूज़ के अलावा उन्हें कुछ और न सुझाई देता था लेकिन जब अपने घर ले जाते थे तो कभी-कभी रात के तीन बज जाए करते थे और मुझे वहीं सोफे पर सोना पड़ता था। हसन साहब ने अपने बारे में जो बताया या बातचीत में पता चला वह कुछ ऐसा था।

हसन साहब के वालिद अरबी फारसी के विद्वान और मौलवी थे। पूरी जिंदगी वे राजा महमूदाबाद की लायब्रेरी में फारसी और अरबी- पाण्डुलिपियों के इंचार्ज रहे और राजा साहब के लिए नायाब पाण्डुलिपियां जमा करते रहे। रिटायर होकर वे अपने आबाई गांव हसुआ चले गये ओर वहीं इंतिकाल हुआ। हसन साहब अपने वालिद के प्रभाव में पक्के मज़हबी और कट्टर शिआ थे। लखनऊ यूनीवर्सिटी से बी.ए. कर रहे थे। उसी ज़माने में उनकी मुलाकात पंडित सुंदरलाल से हो गयी। पंडित जी अपनी मशहूरे-ज़माना किताब 'भारत में अंग्रेजी राज` लिख रहे थे। उन्हें किसी लड़के की ज़रूरत थी जो उनकी मदद कर दे। हसन साहब तैयार हो गये। पंडित जी का साथ

उन्हें ऐसा रास आया कि बी.ए. करने के बाद पंडित जी के साथ ही लगे रहे। उनके सेक्रेटरी हो गये। इसी दौरान हसन साहब आचार्य नरेन्द्र देव, जेड़ अहमद और ज़ोय अंसारी वगैरा के सम्पर्क में आये। पंडित सुंदरलाल उन्हें लेकर हैदराबाद गये। यह उथल-पुथल का ज़माना था। अँग्रेज़ जा चुके थे। निज़ाम पूरी तरह अपने प्रधानमंत्री कासिम रिज़वी के शिकंजे में थे। कासिम रिज़वी हैदराबाद को आज़ाद मुस्लिम देश बनाने के सपने देख रहा था। हथियार मंगवाये जा रहे थे और राज़ाकारों की "फौज तैयार हो रही थी। इसके बाद दंगों वाले दिनों में भी हसन साहब पंडित जी के साथ रहे और फिर एक दिन पंडित जी से कहा कि वे जाना चाहते हैं। पंडित जी जानते थे उन्होंने

मुस्करा कर कहा हां मैं जानता हूं मेरे आंगन का पिछला दरवाजा किधर खुलता है।

हसन साहब सी.पी.आई. के होल टाइमर हो गये। इस बीच विवाह कर लिया था। पार्टी ने उन्हें लखनऊ से दिल्ली भेजा और उर्दू 'लाल पैगाम` का सम्पादक बना दिया। अखबार का दफ्तर दरियागंज में हुआ था और हसन साहब दस किलोमीटर दूर भोगल नाम के एक गांव में रहते थे। हसन साहब ने बताया था कि अक्सर दफ़्तर में इतनी देर हो जाती थी कि कोई सवारी नहीं मिलती थी और वे डबल मार्च कर देते थे। रास्ते में छः सिगरेट पीते थे और रात ग्यारह बजे तक घर पहुंच जाते थे। फिर रण देव का ज़माना आया। पार्टी ने एक ऐसी छलांग लगाने की कोशिश की जिसमें पैर ही टूटना था। प्रेस ज़प्त हो गया। दफ्त़र पर ताले लग गये। हसन साहब के लिए आदेश हुआ कि तेलंगाना जाओ। छः महीनों तक रातों को जागने और दिन में छिपकर सोने में बीते। अंधेरी रातों में गोलियों की तड़तड़ाहट, चीख़ों, रौशनी, पुलिस का आतंक सब देखा। आखिरकार आंदोलन बिखर गया तो फिर वापस आये। पार्टी की लाइन बदल गयी थी। संसदीय लोकतंत्र को पार्टी ने स्वीकार कर लिया था। हसन साहब ने कहा कि जिस दिन ऐसा हुआ उसी दिन मैंने पार्टी से इस्तीफा दे दिया और समझ गया कि अब क्रांति नहीं आयेगी। एक सपना जो एक दशक से ज्यादा उनकी प्रेरणा का स्रोत था वह ख़त्म हो गया था। उसके बाद कहीं न कहीं तो नौकरी करनी ही थी और पत्रकारिता के अलावा कुछ जानते न थे। इसलिए पत्रकार हो गये।

पता नहीं क्यों यह कहा जाता है कि भूतपूर्व कम्युनिस्ट बहुत अच्छा आदमी होता है या बहुत खराब। उससे यह आशा नहीं की जा सकती कि अच्छाई और बुराई दोनों का कुछ-कुछ लेकर चलेगा। इस मान्यता के अनुसार हसन साहब बहुत अच्छे आदमी हैं। ऐसा नहीं है कि उन्हें नापसंद करने वाले कम हैं। ऐसा भी नहीं कि उनका कोई विरोध नहीं होता। लेकिन विरोधी यह मानते हैं कि पीछे से हमला नहीं करता। मानवीयता है। और जो दोस्त हैं वे तो जान देने के लिए तैयार रहते हैं। अखबार की राजनीति के अखाड़े में वे सिर्फ अपने काम में बल पर जमे

हुए हैं। जी.एम. उनकी ताकत को पहचानता है। एडीटरों से आमतौर पर उनका कोई मतभेद इसलिए नहीं होता कि दिल्ली रिपोर्टिंग से एडीटर ज्यादा मतलब रखते भी नहीं। संवेदनशील 'क्षेत्र` विशेष संवाददाताओं को दिए जाते हैं जिन पर एडीटर की सीधी कमाण्ड होती है।

ये मुझे बाद में पता चला कि मैथ्यू के बारे में लोगों ने उड़ा रखी है कि वह 'होमोसेक्सुअल` है मुझे हसन साहब ने जब मैथ्यू के साथ लगाया था तो कई लोगों के चेहरे बहुत ताज़ा नज़र आने लगे थे। एडीटिंग में भी कुछ लोग पूछते थे, तुम मैथ्यू के साथ हो। मेरी समझ में नहीं आता था कि ये ऑफिस की भद्र महिलाएं, सीनियर लोग मुझे और मैथ्यू को साथ देखकर क्यों मुस्कुराते हैं। मैथ्यू पचास वर्ष के हैं, अविवाहित हैं, केरल के हैं। कम बोलते हैं। जब हिंदी में बात करते हैं तो हर वाक्या 'साला` शब्द से शुरु होता है। उनकी अंग्रेजी बहुत अच्छी है। पर कहते हैं "साला न्यूज़ पेपर में काम करने से हमारा इंग्लिश खराब हो गया।" उनके पास कभी साउथ और खासकर केरल के लड़के आते हैं जिन्हें देखकर लोग आंखों ही आंखों में इशारे करते हैं।

सबिंग में एक लड़की सुप्रिया है जिस पर यार लोग डोर डालते रहते हैं। इसके अलावा ट्रेनी लड़कियों को काम सिखाने के लिए भी छड़ों में होड़ लगी रहती है। मैं क्योंकि सबसे जूनियर हूं इसलिए मैं किसी गिनती में नहीं हूं। मैं अपनी इस तरह की इच्छाओं का इजहार भी नहीं कर सकता। रिपोर्टिंग में आठ लोग हैं। ज्यादातर 'यंग` हैं। हसन साहब कहते हैं बूढ़े घोड़े रेस में नहीं दौड़ते। जवान घोड़ों में प्रभात सरकार और एन.पी. सिंह काफी चमकते हैं। बाकी बंसल और अनिल सेठी काम अच्छा करते हैं लेकिन कुछ ऐसे तीसमारखां नहीं हैं। ज्योति निगम आर्ट, कल्चर, फिल्म करती हैं। करीब

चालीस साल की ज्योति निगम ज़रूर अपने ज़माने में 'बहुत कुछ' रही होगी। अब भी आकर्षक हैं और चेन स्मोकर हैं, पार्टी में एक-दो ड्रिंक ले लेती हैं। हसन साहब ज्योति निगम को बहुत मानते हैं। कहते हैं आर्ट और फिल्म की ऐसी समझ जैसी हीरा में है, कम ही देखने को मिलती है।

छः महीने के अंदर में अपनी न्यूज़ सीधे हसन साहब को देने लगा।

प्रभात सरकार ने कहा- "बॉस अब ये काम सीख गये हैं। इसे मैथ्यू साहब से अलग कर दो. . .नहीं तो वे इसे और कुछ सिखा देंगे तो परेशानी हो जाएगी।

——X——

गरजत-बरसत

-Garajat-Barasat in Hindi

1. गरजत-बरसत अध्याय 1
2. गरजत-बरसत अध्याय 2
3. गरजत-बरसत अध्याय 3
4. गरजत-बरसत अध्याय 4
5. गरजत-बरसत अध्याय 5

https://www.hindiadda.com/garajat-barasat-part-i/